चन्दामामा
दिसम्बर १९६६
75 P

चाँद उगा है, फूल खिला है
कदम गाछ तर कौन ?
नाच रहे हैं हाथी-घोड़े
ब्याह करेगा कौन ?

ताँती के घर बेंग बसा है
ढोंसा को है तोन्द !
खाता-पीता मौज उड़ाता
गाना गाता कौन ?

हँसी के इस फुहारे को छोड़ते ही करोड़ों-करोड़ शिशुओं के खिलखिलाते प्रफुल्लित चेहरे नजर के सामने उभर आते हैं।

प्रगतिशील भारत में शिशुओं के स्वास्थ्य को आकर्षक बनाये रखने के लिये 'डाबर' ने तरह-तरह के प्रयोग एवं परीक्षण के बाद–'डाबर जन्म-घूँटी' का निर्माण किया है।

डाबर जन्मघूंटी

शिशुओं के सभी प्रकार के रोगों में व्यवहार की जाती है।

डाबर (डा. एस. के. बर्म्मन) प्रा. लि., कलकत्ता-२९

WPS

For the best quality:

AGARBATHIES

PADMA PERFUMERY WORKS, MAMULPET, BANGALORE - 2.

हंसता खेलता मुन्ना

मां के प्यार की दुनियां

नौनिहाल बच्चों को स्वस्थ जीवन प्रदान करता है और उन में रोग से बचने की शक्ति को बढ़ाता है।

नौनिहाल के प्रयोग से बच्चे सदैव स्वस्थ और प्रसन्न रहते हैं।

हमदर्द

दिल्ली • कानपुर • पटना

अरे,
इसे तो सर्दी
लग गयी है!
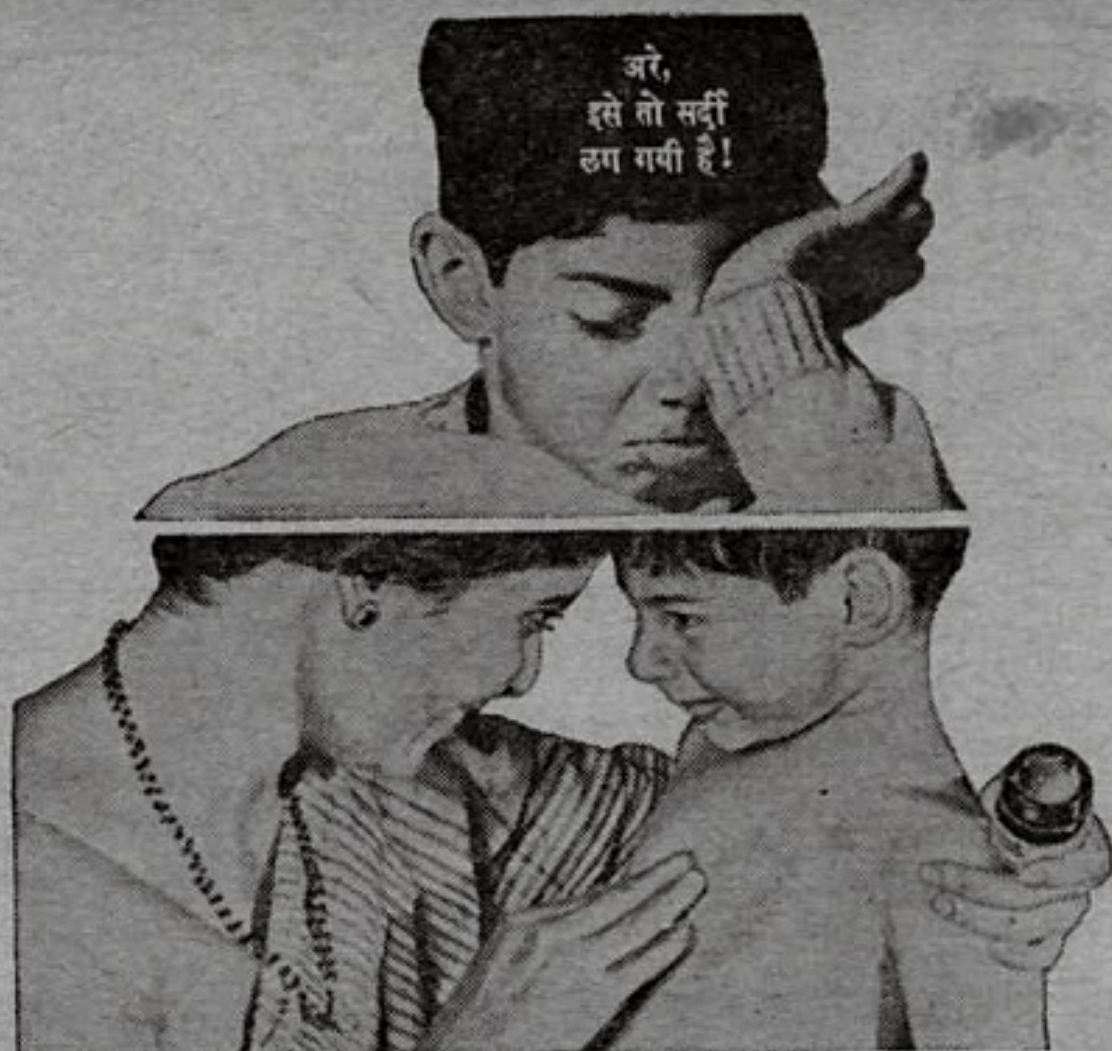
बस हल्के हल्के वेपोरब मलिये इसकी गरमाहट से मुन्ने को फ़ौरन आराम मिलता है...आसानी से साँस लेने लगता है और रात भर चैन की नींद सोता है।

आप ही मुन्ने को आराम दे सकती हैं। जब उसे सर्दी लगी हो बस आप ममताभरे हाथों से विक्स वेपोरब छाती, गले, नाक और पीठ पर मलिये। देखते ही देखते भारीपन दूर होने लगता है और आपका मुन्ना फिर आसानी से साँस लेने लगता है क्यों कि विक्स वेपोरब की आरामदायक दवाइयां केवल सात सेकण्डों में ही सर्दी से जकड़े भागों पर असर करने लगती हैं।

अब मुन्ने को आराम से बिस्तर पर सुला दीजिए। जब कि मुन्ना चैन से सोता है, वेपोरब अपना असर रात भर करता रहता है। सुबह तक सर्दी ज़ुकाम दूर हो जाता है और आपका प्यारा लाडला खुश और तन्दुरुस्त उठता है।

विक्स वेपोरब सर्दी ज़ुकाम के लिए आज रात ही मलिये

दिलीप और उसके साथी
साँप और सीढ़ियाँ खेलने लगे
बारिश ने हमारी छुट्टी बरबाद कर डाली। हमें आज घर के अन्दर ही खेलना पड़ेगा।
तो हम साँप और सीढ़ियाँ ही खेलें!
मुझे छै मिला, एक बार फिर खेलूंगा। देखो, मुझे सबसे बड़ी सीढ़ी मिल गई।
वाह, वाह! अशोक साँप के मुँह से नीचे जा रहा है!
फ्यूज़
हाय राम! बत्ती बुझ गई!
और ठीक तभी जब हम लोगों को खेल में मज़ा आ रहा है!
ठहरो, मैं अपना 'एवरेडी' लाता हूँ। फिर, हम लोग खेलते रह सकेंगे।
बहुत खूब—अब हम लोग खेल पूरा कर सकते हैं।
और मुझे कोई शक नहीं कि 'एवरेडी' की मदद से मैं जरूर जीतूंगा।
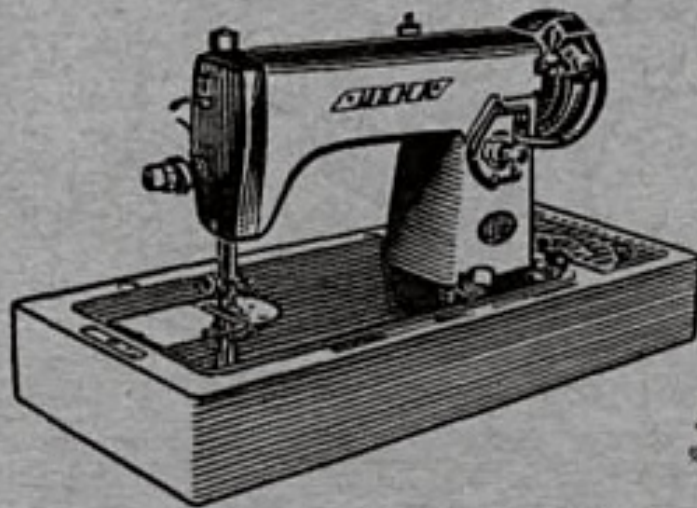
गेवर्ट

गेवाबॉक्स ही लीजिये

गेवाबॉक्स

५०% बड़ी और बढ़िया तस्वीरें उतारता है !

गेवाबॉक्स बढ़िया और चौरस तस्वीरें उतारता है—६ सी एम × ९ सी एम जितनी बड़ी ...साधारण कैमरों से उतारी गई तस्वीरों से ५०% बड़ी। और नैगेटिव की क्वालिटी विशेष रूप से अच्छी होने के कारण एन्लार्जमेंन्ट भी बहुत ही अच्छे बनते हैं!

इन उल्लेखनीय विशेषताओं के कारण **गेवाबॉक्स** सबसे बढ़िया कैमरा माना जाता है—

- **मज़बूत, आकर्षक बॉडी, बढ़िया इस्पात से बनाई जाती है।**
- **चमकदार, साफ़ आइ-लैवल व्यू फ़ाइन्डर के कारण मनचाही 'कम्पोज़ीशन,' तस्वीरें जल्दी और आसानी से खींची जा सकती हैं।**
- **३ स्पीड (बल्ब, १/५० वाँ और १/१०० वाँ सेकन्ड) अचूक 'फ़ास्ट-एक्शन' की तस्वीर ली जा सकती हैं।**
- **२ एपर्चर (एफ़ ११ और एफ़ १६)-किसी भी वस्तु गहराई की सही 'फ़ोकसिंग' होती है।**

और इसके अतिरिक्त इसको चलाना सबसे ही आसान काम है। आप सिर्फ़ 'क्लिक' कीजिये, बाक़ी का काम गेवाबॉक्स खुद कर लेगा। अपने डीलर से इसको चलाकर दिखाने के लिये कहिये। मूल्य: रु. ४४.००

गेवर्ट

गेवाबॉक्स

एग्फ़ा—गेवर्ट इंडिया लिमिटेड।
कस्तूरी बिल्डिंग, जमशेदजी टाटा रोड,
बम्बई १.

Bensons/1-AGIL-1 Hin

चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
अर्थ कमाना भी जीवन के उद्देश्यों में एक है। पर अर्थ के लिए अनैतिक हो जाना अपराध है। अर्थ का उपार्जन उचित साधनों द्वारा ही होना चाहिए। अनुचित अर्थ से जीवन में वह आनन्द भी नहीं मिलता, जिसके लिए वह कमाया जा रहा है। इसके दृष्टान्त के रूप में इस अंक में अन्यत्र "अर्थलोभ" की कहानी दे रहे हैं।
वर्ष: १८ दिसम्बर १९६६ अंक: ४
CHITRA

भारत का इतिहास

उसके कुछ साथियों को उत्तर भारत के विजय की योजना न जंची। परन्तु बाजीराव ने शाहुजी को इसके लिए मना लिया। ताकि हिन्दू राजाओं को उसकी योजना स्वीकृत हो, उसने "हिन्दू बाद बादशाही" (हिन्दू साम्राज्य) का नारा शुरू किया।

१७२३ के दिसम्बर में जब उसने मालवा पर आक्रमण किया तो हिन्दू राजाओं ने कई कष्ट झेलकर उसकी मदद की। पारम्परिक कलह के कारण गुजरात मराठाओं के हाथ आ गया। परन्तु मराठाओं में ही बाजीराव के विरुद्ध एक पक्ष बन गया। इस पक्ष का सरदार त्रिम्बकराव धाबादे था। वह गुजरात का सेनापति था। बाजीराव से ईर्ष्या होने के कारण कोल्हापुर के शिवाजी के वंशज राजा शम्भूजी द्वितीय और निजामुलमुल्क ने त्रिम्बकराव का साथ दिया। परन्तु बाजीराव ने चालाकी से अपने शत्रुओं की चालें भंग कर दीं। एप्रिल १, १७३१ को बिल्हापुर मैदान में युद्ध हुआ। उसमें त्रिम्बकराव हरा दिया गया और मार भी दिया गया। पेशवाओं के इतिहास में बाजीराव की इस विजय का विशेष महत्व है। इसके बाद ऐसा कोई शत्रु न रह गया, जो उसका मुकाबला कर सकता था। १७३१ अगस्त में निजामुलमुल्क से एक सन्धि की। उस सन्धि के अनुसार निजामुलमुल्क जैसा वह चाहे दक्षिण में अपना अधिकार बढ़ा सकता था और मराठे, उत्तर में उसी प्रकार कर सकते थे।

सौभाग्य से बाजीराव को, अम्बर के राजा द्वितीय जयसिंह और छत्रसाल बुन्देला

की मैत्री मिली। वह १७३७ में दिल्ली के पास तक अपनी सेनायें ले गया। पर उसने दिल्ली पर इसलिए हमला नहीं किया, ताकि बादशाह को तकलीफ़ न हो। इन मराठाओं से पिंड छुड़ाने के लिए बादशाह ने निजामुलमुल्क की मदद माँगी। ६ वर्ष पूर्व की गई सन्धि का उलंघन करके निजामुलमुल्क मराठाओं का मुकाबला करने निकल पड़ा। भूपाल के पास दोनों पक्षों में युद्ध हुआ। निजामुलमुल्क पराजित हुआ। उसने फिर बाजीराव से सन्धि की। इस सन्धि के फलस्वरूप सारा मालवा बाजीराव के नीचे आ गया। इसको बादशाह ने भी स्वीकार किया। खर्च के तौर पर पेशवा को ५० लाख रुपये देने पड़े। इस सन्धि के अनुसार देश के कुछ भाग में मराठाओं का अधिकार और स्थिर हो गया।

१७३९ में पश्चिम तक के पोर्चुगीज के साल्सेट और बसीन उपनिवेषों को भी मराठों ने अपने आधीन कर लिया। परन्तु इतने में बाजीराव नादिरशाह के आक्रमण की खबर सुनकर चिन्तित हो उठा। वह अड़ोसपड़ोस के मुसलमानों से शत्रुता छोड़कर, मिलकर नादिरशाह का मुकाबला करने का प्रयत्न करने लगा। परन्तु इस प्रयत्न के पूर्ण होने से पूर्व ही १७४० एप्रिल में ४२ वर्ष की उम्र में बाजीराव की मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु मराठा साम्राज्य के लिए एक बड़ी क्षति थी। मराठाओं के साम्राज्य संस्थापकों में वह दूसरा कहा जा सकता है।

यह सच है कि बाजीराव के समय मराठाओं की शक्ति और कीर्ति दोनों बढ़ीं। परन्तु मराठाओं की ऐकता जाती रही। इसका कारण जागीरदारी प्रथा का

फिर अमल में आना था। जहां तहां अर्ध स्वतन्त्र राज्य बन गये। धीमे धीमे केन्द्रीय शासन शिथिल हो गया और अन्त में समाप्त ही हो गया। पहिला अर्ध स्वतन्त्र राज्य बीरार का था, उसका राजा रघूजी भोंसले था। उसी प्रकार बरोड़ा में गायकवाड़ों का आधिपत्य प्रारम्भ हो गया। बाजीराव के आधीन अधिकारी रनोजी सिन्धिया ने मालवा में अपना राज्य बना लिया। मालवा के एक और प्रान्त का शासक मल्हारराव होल्कर बन गया। उसने भी कभी बाजी के नीचे काम किया था।

बाजीराव के बाद उसका बड़ा लड़का बालाजी द्वितीय पेशवा बन गया। (इसे ही नानासाहब या बालाजी बाजीराव भी कहा करते थे।) मराठा सरदारों ने इसके पेशवा बनने का विरोध किया। कारण यह था कि उसकी उम्र अट्ठारह वर्ष की थी और वह विलासी था। पिता का सामर्थ्य इसमें न था। परन्तु वह नितान्त असमर्थ भी न था। सेनाओं के शासन में और युद्धतन्त्र में उसने पिता की नीति का पालन किया।

१७४९ में शाहूजी ने मरते समय शासन का अधिकार पेशवाओं को दे दिया। शिवाजी के वंश के ताराबाई के पोते को उत्तराधिकारी नियुक्त किया गया। परन्तु ताराबाई ने इसका विरोध किया। उसने पेशवा से युद्ध किया। बालक राजा को पकड़कर उसने कैद में डलवा दिया। परन्तु युद्ध में पेशवा की विजय हुई। तब से मराठाओं के पेशवा ही मुख्य शासक बने।

नेहरू की कथा

[२९]

१९३०, जनवरी २६ को स्वतन्त्रता दिन आया। इस उत्सव से साफ हो गया कि देश में जोश था और तैयार था। सब जगह बड़ी बड़ी सभायें की गईं और स्वतन्त्रता का प्रण किया गया। इसमें गान्धी जी ने भी निश्चय किया कि देश आन्दोलन के लिए तैयार था।

१९२१-२२ के सत्याग्रह को चोरी चौरी के हिंसाकाण्ड के कारण गान्धी जी को समाप्त करना पड़ा था। जवाहर आदि को डर था, कहीं इस बार भी कुछ वैसा न हो। गान्धी जी का विश्वास था कि यदि सत्याग्रह का ठीक तरह पालन किया गया, तो उसमें कभी विफलता न होगी। यही नहीं, वह एकमात्र साधन भी था। उन्होंने कहा कि जब तक हिंसा, आन्दोलन का एक भाग नहीं हो जाता, तब तक वे आन्दोलन समाप्त नहीं करेंगे। इससे जवाहर आदि बहुत सन्तुष्ट हुए।
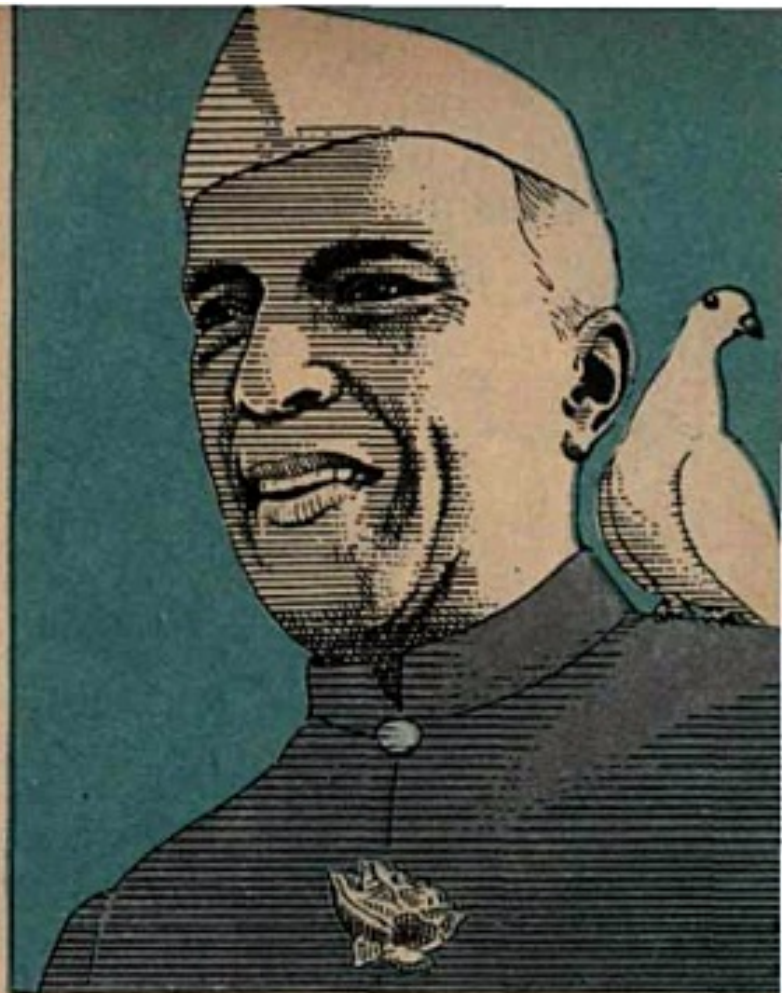
लोग यह सोच ही रहे थे कि यह असहयोग आन्दोलन किस प्रकार प्रारम्भ होगा कि गान्धी जी ने "नमक" का मन्त्र-सा दिया। उन्होंने घोषित किया कि नमक के कानून का उलंघन और भिकरण हो।

जवाहर आदि को पहिले तो आश्चर्य हुआ कि नमक और स्वतन्त्रता का क्या सम्बन्ध था। गान्धी जी द्वारा उद्घोषित स्वतन्त्रता के ग्यारह सूत्र सुनकर भी जवाहरलाल नेहरू को आश्चर्य हुआ। उन्हें यह भी सन्देह हुआ कि जिस स्वतन्त्रता की वे कल्पना कर रहे थे और गान्धी जी

जिस स्वतन्त्रता के स्वप्न देख रहे थे, क्या वे दोनों एक ही हैं। परन्तु यह संकोच और झिझक का समय न था। प्रति दिन देश में परिस्थितियाँ बदलती जाती थीं। संसार में विचित्र घटनाएँ हो रही थीं। मन्दी शुरू हो गई थी। यह एक भयंकर आर्थिक दुर्घटना थी। दाम गिरते जाते थे। नगरवासी सन्तुष्ट थे। पर किसान चिन्तित थे।

ऐसी परिस्थिति में गान्धी जी दण्डी सत्याग्रह के लिए साबरमती आश्रम से सत्याग्रह के लिए निकले। ज्यों ज्यों दण्डी यात्रा चलती जाती थी, त्यों त्यों देश में चेतना भी बढ़ती जाती थी। सारे देश में आन्दोलन प्रारम्भ होने का समय पास आ गया था। अहमदाबाद में अखिल भारतीय कान्ग्रेस कमेटी की एक बैठक हुई। उसमें आन्दोलन के लिए आवश्यक व्यवस्था की गई। आन्दोलन चलानेवाले दण्डी की ओर जा रहे थे और बुलाने पर भी न आ रहे थे। इसलिए सारा काम जवाहर आदि के कन्धों पर पड़ा।

आन्दोलन के शुरु होते ही गिरफ्तारियाँ भी शुरु हो जाती थीं। इसलिए कार्यकारिणी समिति की ओर से निर्णय करने का अधिकार और गिरफ्तार हुए सदस्यों के स्थान पर, नये सदस्यों को नियुक्त करने का अधिकार कान्ग्रेस के अध्यक्ष को दिये गये। इस प्रकार के अधिकार प्रान्तीय और स्थानीय कमेटियों के अध्यक्षों को भी दिये गये। आन्दोलन "डिक्टेटरों" द्वारा चलाया जा रहा था। इस "डिक्टेटर" शब्द पर बहुत आपत्ति की गई। ब्रिटिश सेक्रेटरी आफ़ स्टेट, भारत के वायसराय गवर्नरों ने भी इस बात पर इस तरह अंगुली उठाई, जैसे वे बड़े प्रजातन्त्र के

समर्थक हों। उन्होंने कहा—"कान्ग्रेस निरंकुशता का समर्थन कर रही थी।"

पर और कोई रास्ता न था। सरकार, कान्ग्रेस संस्था को निषिद्ध कर सकती थी। उस हालत में अधिवेषनों और बैठकों के लिए मौका न मिलता, आन्दोलन के नेताओं को व्यक्तिगत रूप से निश्चय करने होते और उनको कार्य में परिणित करना होता। फिर भी इन डिक्टेटरों के कौन-सा बड़ा अधिकार था....जेल जाने का अधिकार ही!

इस प्रकार की व्यवस्था करके अहमदाबाद से वापिस आते हुए मोतीलाल और जवाहरलाल, गान्धी जी से जम्बुसर के पास मिले। वहाँ, तब, वे और उनके साथी पहुँच गये थे। वहाँ गान्धी जी से कुछ देर मिले। गान्धी जी फिर अपने साथियों को लेकर अगले पड़ाव की ओर चल दिये।

लाठी हाथ में लेकर निर्भय हो, गान्धी जी को आगे चलता देख, जवाहरलाल नेहरू का हृदय द्रवित-सा हो उठा।

जम्बुसर में मोतीलाल जी की गान्धी जी से एक मुख्य विषय पर बातचीत हुई। उन्होंने इलहाबाद में अपने पुराने बंगले

का नाम "स्वराज भवन" रखा और उसे उन्होंने देश को दे देने का निश्चय किया। अलहाबाद पहुँचते ही श्री मोतीलाल ने इस सम्बन्ध में एक घोषणा की और कान्ग्रेस कर्मचारियों को अपना मकान दे दिया। इस बड़े बंगले का एक भाग हस्पताल बना दिया गया। परन्तु इस बंगले के दान के बारे में सम्बन्धित कागज़ों पर मोतीलाल जी की मृत्यु के बाद श्री जवाहरलाल जी ने हस्ताक्षर किये।

गान्धी जी के पश्चिमी समुद्र तट पहुँचते पहुँचते एप्रिल हो गया। इस बीच स्वयंसेवक

भी प्रशिक्षित हो गये। जवाहर जी की पत्नी कमला और बहिन कृष्णा ने भी पुरुषों के वेष में स्वयं सेवकों का प्रशिक्षण प्राप्त किया।

अप्रैल ६ को राष्ट्रीय सप्ताह का पहिला दिन था। उसी दिन गान्धी जी ने दण्डी में नमक कानून का उलंघन किया। और तीन चार दिन में कान्ग्रेस ने आदेश दिया कि सारे देश में इस कानून का उलंघन किया जाये।

एक साथ सारे देश में नमक बनाया जाने लगा। नमक कैसे बनाया जाये, न जवाहर जानते थे, न उनके साथी ही। इधर उधर की पुस्तकें पढ़कर कैसे नमक बनाया जाये इस सम्बन्ध में पर्चे छपवाये। घड़ों में जब नमक बनाने का प्रयत्न किया गया तो कोई चीज़ अवश्य तैयार हो गई और वह बड़े दामों पर नीलाम भी हो गई। समस्या यह न थी कि इस तरह बनाया गया नमक खाने के काम आयेगा कि नहीं, मुख्य बात नमक कानून का उलंघन था। जिस तरह आन्दोलन फैलता गया, उसे देख जवाहरलाल नेहरू को आश्चर्य हुआ। गान्धी जी, देशवासियों में उत्साह संचरित करने में बड़े निपुण थे।

१४ एप्रिल को जवाहरलाल जी गिरफ्तार हो गये। उन्होंने पहिले ही घोषित कर दिया था कि उनके बाद या तो गान्धी जी नहीं तो उनके पिता कान्ग्रेस के अध्यक्ष बनें। गान्धी जी इसके लिए न माने। अतः मोतीलाल जी को अध्यक्ष का काम करना पड़ा।

गिरफ्तारी के दिन ही श्री जवाहरलाल जी की सुनवाई शुरु हुई। उनको छः महीने की सज़ा दी गई।

पाताल दुर्ग

[७]

[सैनिकों को गुफ़ा में कालशम्बर और कुम्भीर नहीं दिखाई दिये। एक गुफ़ा में दो सैनिक अजगर के शिकार हुए। धूमक को कालशम्बर का मन्त्रदण्ड मिला। उसी समय कदम्ब देश का मन्त्री घायल हो घोड़े पर सवार होकर आया। वह अपने राजा उग्रसेन के सामने "सर्वनाश" कहता गिर पड़ा। बाद में—]

गंगाधर ने वैद्य को बुलाकर कदम्ब मन्त्री के घावों की मरहमपट्टी करने के लिए कहा। दो सैनिकों ने मन्त्री को एक पत्थर के सहारे बिठाया। राजा उग्रसेन ने उसके सामने आकर पूछा—"अमात्य! यह सब क्या है?"

कदम्ब मन्त्री के मरहमपट्टी होते ही, गंगाधर ने पूछा—"अमात्य, अब बताओ! क्या कदम्ब नगर पर शत्रु हमला कर रहे हैं?"

कदम्ब मन्त्री ने ईशारा किया कि उसे प्यास लग रही थी। सैनिक ने उसको पानी दिया। मन्त्री प्यास बुझाकर कुछ सम्भला—"ये कुन्तल देश के महामन्त्री मालूम होते हैं।" उसने गंगाधर की ओर सिर हिलाया। "ज्योहि मैंने सुना

कि कदम्ब नगर पर शत्रुओं ने आक्रमण किया है, मैंने सोचा कि कुन्तल देशवाले होंगे।" यह कहकर उसने उग्रसेन की ओर देखा।

राजा उग्रसेन ने कोप में काँपते हुए कहा—"तुम यही न कहना चाह रहे हो कि कदम्ब नगर पर शत्रुओं का अधिकार हो गया है।" उसने मन्त्री से ऊँची आवाज में पूछा।

"महाराज, आप शान्त रहिये।" कहकर उग्रसेन को शान्त किया। फिर कदम्ब मन्त्री से पूछा—"तो भी ये शत्रु कौन हैं?"

"शत्रु अगर कहीं बाहर के होते, तो शायद नगर वश में न होता। कदम्ब वासियों ने ही विद्रोह किया था। वे बिना चमक के बिजली की तरह बिना बादल के वारिश की तरह नगर पर आ टूटे और नगर के कई लोग उनके साथ हो गये। कुछ ही देर में उन्होंने महल पर हमला किया और खज़ाना ही लूट लिया।" कदम्ब मन्त्री ने कहा।

"खज़ाना ही लूट लिया! मेरा खज़ाना! कितनी ही पीढ़ियों से जमा किया गया पैसा, सोना, चान्दी, सब कुछ...." कहता उग्रसेन जोर से गरज़ा। "फिर भी इन विद्रोहियों का नेता कौन है? अभी मैं उनको अपनी तलवार के घाट उतार दूँगा। कहाँ है मेरा घोड़ा?" तलवार निकालकर वह दूर चरते हुए अपने घोड़े की ओर दौड़ा।

गंगाधर ने उग्रसेन का हाथ पकड़कर रोकते हुए कहा—"महाराज, मैं यह नहीं जान पा रहा हूँ कि आपको अपनी लड़की अधिक प्यारी है, या खज़ाना। थोड़ा सम्भलिये। जल्दबाजी से कोई काम नहीं बनेगा।"

फिर उसने कदम्ब मन्त्री से पूछा "इन विद्रोहियों का कोई नेता है क्या ? या भीड़ ही यह कर रही है ?"

"महामन्त्री ! उनका सरदार क्यों नहीं है। धूमक और सोमक मातृहन्तक हैं न ? वे ही इन लोगों के नायक हैं। खज़ाना लूटो, उसमें हमसे लूटा गया धन ही हैं। चिल्लाते हुए उन्होंने लोगों को खज़ाने की ओर भगाया।" कदम्ब मन्त्री ने कहा।

सोमक दान्त पीसकर, नथने फुलाकर तलवार निकालनेवाला ही था कि धूमक ने उसको ईशारे से रोका।

गंगाधर के सामने आकर उसने कहा—"प्रभू, देखा आपने यह अन्याय ? दो दिन से हम कदम्ब नगर के पास भी नहीं हैं। कदम्ब राज्य के शासक कितने नीच और झूटे हैं, यह अब आप समझ ही गये होंगे।"

गंगाधर ने कदम्ब मन्त्री की ओर तरेरते हुए कहा कि पिछले अढ़तालीस घंटों से कदम्ब के शासकों ने एक भी सच न कहा था। युवरानी को राक्षस उठा ले गया है। खज़ाने को लूट लिया गया है।

राज्य शत्रुओं के हाथ आ गया है। दोनों शासक खतरनाक हालत में हैं। पापों का और झूटों का इससे बढ़कर प्रायश्चित्त क्या हो सकता है ?

राजा उग्रसेन ने लज्जित होकर कहा—"महाराज, जो कुछ हुआ है मैं उसके लिए शर्मिन्दा हूँ। मुझे इसकी कोई चिन्ता नहीं है कि राज्य चला गया है। राक्षस से अपनी लड़की छुड़ाने के लिए मैं आपकी सहायता चाहता हूँ।"

"महाराज ! सहायता की क्या बात है ? मेरा सन्देह है कि शशिकान्त को

मान्त्रिक उठा ले गया है?" फिर गंगाधर ने रुककर कहा—"ये ध्वनियाँ क्या हैं? शोर, हो हल्ला तुमको नहीं सुनाई दे रहा है?" उसने अपने सैनिकों की ओर मुड़कर पूछा।

दो चार सैनिक वहाँ ऊँचे पत्थरों पर खड़े होकर उस ओर देखने लगे, जिस ओर से तालियों की आवाज़ आ रही थी।

"हुज़ूर, लोग जत्थों में इस ओर आ रहे हैं। उनमें से कुछ तालियाँ बजाकर नृत्य कर रहे हैं।"

इतने में एक घुड़सवार बाण की तरह उग्रसेन के पास आकर घोड़े से उतरा। उसके कपड़े कहीं कहीं जले हुए थे। खाली मियान लटक रही थी। वह उग्रसेन का खज़ान्ची था।

"महाराज, खज़ाना लूट लिया गया है। मैं जिन्दा भाग आया हूँ। लोग आपके लिए इस ओर आ रहे हैं। भाग जाइये, नहीं तो जान न बचेगी।" कहता वह उग्रसेन के पैरों पर पड़ गया।

"कहाँ भागें? कैसे भागें?" गंगाधर ने पूछा। उसने धूमक और सोमक के पास आने के लिए कहा।

"सेना को एकत्रित करके, उन राजद्रोहियों को मारिये महाराज।" कदम्ब मन्त्री ने अपने राजा को सलाह दी।

"सेनायें?" गंगाधर ने परिहास किया। जब सब लोग बगावत कर रहे हैं, तो सेनायें क्या हवा से पैदा करोगे मन्त्री? मन्त्री को यूँ फटकार बताकर उसने कहा—"अब तुम्हारी रक्षा करनेवाले धूमक और सोमक हैं। धूमक और सोमक क्या यह काम तुम करोगे?"

CHITRA

"इस राजा और मन्त्री के प्राणों की तो हम रक्षा कर सकते हैं, पर उनका राज्य हम उनको वापिस नहीं दे सकते।" धूमक ने कहा।

"बिना राजा के कहीं राज्य होता है? क्या तुम्हारी अक्ल मारी गई है धूमक!" गंगाधर ने उसे डाँटते हुए कहा।

"महामन्त्री! मैं राज्य नहीं चाहता। मैं अभी ही अपनी लड़की को खोजता जंगलों में चला जाऊँगा।" उग्रसेन ने कहा।

"राजा हो तभी न मन्त्री रहता है।" कदम्ब मन्त्री ने कहा।

"राज्य ही जब न हो, तब खज़ाना किस काम का? मैं भी आपके साथ आऊँगा।" खज़ान्ची ने उग्रसेन के पैर पकड़कर कहा।

"तुम में से एक को भी ज़िन्दा वह आनेवाली भीड़ न जाने देगी।" सोमक चिलाया।

"यहाँ आज्ञा देनेवाला मैं हूँ। कोई इधर उधर की बातें न करें!" गंगाधर ने आँखें लाल करते हुए कहा—"उग्रसेन महाराज और उनके आदमी कुन्तलदेश के राजा के आश्रय में आये हैं। उनकी प्राणों की रक्षा करना मेरा कर्तव्य है। धूमक और सोमक तुम अभी जाओ लोगों को कदम्ब नगर की ओर भेज दो। यदि वे आगे बढ़े, तो खून खराबी होगी।" यह कहकर उसने अपने सैनिकों को तैय्यार रहने के लिए कहा।

कुन्तल देश के मन्त्री की आज्ञा सुनकर धूमक और सोमक को आश्चर्य हुआ और क्रोध भी आया। सोमक कोई कसम खाने के लिए अपना हाथ उठाने को था कि धूमक उसका कन्धा पकड़कर उसको दूर ले गया।

"सोमू, जल्दबाजी अच्छी नहीं है। यदि हमने गंगाधर मन्त्री से झगड़ा मोल लिया, तो उसके सुसज्जित सैनिक हमारे कदम्ब के लोगों को आसानी से हरा देंगे और फिर उस उग्रसेन को गद्दी पर बिठा देंगे। इसलिए फिलहाल उनसे राजी कर लेना ही अच्छा है।" धूमक ने उसको समझाते हुए कहा।

सोमक ने हिचकिचाते हुए सिर हिलाया। धूमक के साथ निकल पड़ा। दोनों घोड़ों पर सवार होकर विजय नाद करते कदम्ब वासियों की ओर चले।

नागरिकों में से कुछ ने उनको पहिचानकर कहा—"वह देखो धूमक, सोमक! उनके नेतृत्व में हम कुन्तल देश के राजा शतभानु को भी गद्दी से उतारकर जंगल भेज सकते हैं।"

धूमक ने लोगों के पास जाकर कहा। उनको शोर करने से रोका—"नागरिको! अब अच्छा यही है कि आप कदम्ब नगर वापिस चले जायें। उग्रसेन और उसका मन्त्री, कुन्तल देश के मन्त्री गंगाधर की शरण में चले गये हैं। यदि उन दोनों को इस समय आप मारना चाहेंगे तो कुन्तल देश के सैनिकों से युद्ध अवश्यम्भावी है। उस युद्ध में हम विजयी होंगे, इसमें मुझे सन्देह है। मान भी लें कि हम जीत गये, कुन्तल राजा अपनी सारी सेना लेकर हम पर हमला करेगा। इस बात का आप ध्यान रखें।"

"उसका हम मुकाबला करेंगे। हम इस राजतन्त्र को समाप्त करने के लिए अपने प्राण तक अर्पित करने को तैयार हैं।" भीड़ में से कई युवक जोर जोर से चिल्लाये।

"आत्मार्पण और आत्महत्या में शायद तुम भेद नहीं पहिचान रहे हो।" कहता धूमक जोर से हँसा। "ये चिल्लानेवाले वीर घर जाकर खेलें कूदें, तो अच्छा है। मैं कदम्ब नगर के मुख्य नागरिकों को आगे आने के लिए कहता हूँ।" धूमक ने कहा।

भीड़ में से रास्ता निकालकर चार पाँच वृद्ध आगे आये। धूमक घोड़े से उतरा। उनको नमस्कार करके उसने कहा—"मैं चाहता हूँ कि अब आप नेतृत्व करें और इन युवक वीरों को ज़रा काबू में रखें। जैसा गंगाधर ने कहा है, बिना राजा के राज्य नहीं रहेगा। अब उग्रसेन कदम्ब देश का राजा बनकर नहीं आ सकता है। पर उसकी लड़की कान्तिसेना के बारे में क्या कहा जाये?" उसने कहा।

"हम चाहते हैं कि कान्तिसेना हमारी रानी बने।" लोग चिल्लाने लगे। नगर के वृद्धों ने भी इसकी स्वीकृति दी।

"यही बात है, तो सब शान्त हो कदम्ब नगर चले जाइये। उस युवरानी को, जिसे राक्षस उठा ले गया है, वापिस लाने की ज़िम्मेवारी मेरी है।" धूमक ने कहा।

लोग धूमक का एक बार जय जयकार करके, नगर की ओर चल दिये। धूमक और सोमक घोड़े मोड़कर गंगाधर की ओर जा रहे थे कि धूमक की कमर से लटकता कालशम्बर का मन्त्रदण्ड "जय" कहता रस्सी तोड़कर आकाश में उड़ा। सोमक जोर से चिल्लाकर घोड़े पर से, उस मन्त्रदण्ड को पकड़ने के लिए उछला।

(अभी है)

अर्थलोभ

विक्रमार्क ने हट न छोड़ा। वह फिर पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव उतारकर, कन्धे पर डाल वह हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"तुम्हारी तरह लगन से काम करने वाले बहुत कम होते हैं। अधिक लोग अर्थलोभ की तरह बिना अधिक प्रयत्न के अधिक लाभ चाहते हैं। पर ऐसे लोगों को लाभ कम ही होता है। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, मैं अर्थलोभ की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यूँ सुनाना शुरु किया।

जब काँची नगर का बाहुबल नाम का राजा था उसके यहाँ अर्थलोभ नाम का एक धनी व्यापारी रहा करता था। यह

वेताल कथाएँ

सोच कि व्यापार के देखने भालने के लिए यदि उसने अपने बन्धु-बाधव नियुक्त किये तो वे धोखा दे सकते हैं, उसने अपनी पत्नी को ही यह व्यापार का काम सौंपा।

अर्थलोभ की पत्नी का नाम मानपरा था। वह बड़ी सुन्दर थी। वह सुन्दर ही नहीं बड़ी अक्लमन्द भी थी। बातचीत आदि में कुशल थी। वह पति की आज्ञानुसार हर किसी से मीठे तौर पर बात करके अपने सौंदर्य और सम्भाषण से आकर्षित करके पति के व्यापार को निरन्तर बढ़ाती गई। अर्थलोभ ने अपनी पत्नी की कार्यकुशलता से प्रभावित होकर उसको यथेच्छ व्यापार करने दिया।

इतने में सुखद नाम का एक बड़ा व्यापारी बाहर किसी देश से आते हुए, अपने साथ बहुत-से घोड़े और वस्त्र लेकर काँची आया। यह जानकर अर्थलोभ ने अपनी पत्नी से कहा—"सुखद नाम का एक विदेशी व्यापारी बीस हज़ार घोड़े और बहुत-से रेशमी कपड़े लाया है। तुम उससे पाँच सौ घोड़े और पाँच हज़ार कपड़ों की बेलें ले लो। फिर उन्हें अपने राजा को बेचकर ही काफ़ी लाभ पा सकते हैं।"

पति के कहे अनुसार मानपरा सुखद के घर गयी। उससे कहा कि उसे घोड़े और कपड़े चाहिए और उसने उनका दाम जाना। मानपरा का सौन्दर्य देखकर सुखद मुग्ध हो उठा। उसने उससे कहा—"मैं तुम्हें न घोड़े बेच सकता हूँ, न कपड़े ही। यदि तुमने मेरे साथ एक रात बिताई, तो तुम्हें पाँच सौ घोड़े और पाँच सौ हज़ार कपड़ों की बेलें....उपहार में दे दूँगा।

"यह बात मैं अपने पति से कह दूँगी।" कहती मानपरा उठी और अपने घर चली गई। सुखद की बात सुनकर अर्थलोभ का क्रुद्ध होना तो अलग, उसने कहा—"अगर पाँच सौ घोड़े और पांच हज़ार कपड़े की बेलें जब उपहार में मिल रही हों, तो तुम्हारे उसके साथ एक रात बिता देने में क्या हर्ज है? तुम आज शाम उसके पास जाओ और कल सवेरे आना।

मानपरा सुखद के घर गई। यह जानते ही कि वह उसकी इच्छा पूरी करने आई थी सुखद ने तुरत अर्थलोभ के घर पाँच सौ घोड़े और पाँच हज़ार कपड़े की बेलें भेज दीं।

सवेरा होते ही अर्थलोभ ने अपनी पत्नी को लिवा लाने के लिए सुखद के घर अपने नौकरों को भेजा।

"मुझे तुम्हारे मालिक ने एक और की पत्नी के रूप में बेच दिया है। अब मैं किसी और की पत्नी हूँ। यदि तुम्हारे मालिक में शर्म वर्म नहीं है, तो मुझ में तो है। तुम अपने मालिक से कहो कि मैं नहीं आऊँगी।" मानपरा ने नौकरों से कहा।

नौकरों की बात सुनकर अर्थलोभ ने अपनी पत्नी को जबर्दस्ती लाने की सोची। उसने इस बारे में अपने मित्र हर बल से सलाह मशवरा किया। हर बल ने उसे ऐसा करने से रोका।

"पत्नी के द्वारा लाभ पाने की सोचकर तुम मूर्ख बने और उसके लिए धन का त्याग करके, वह शूर बन गया। उस जैसे के लिए प्राण तक अर्पित करनेवाला परिवार होगा। मित्र होंगे। तुम्हारे कोई भी नहीं है। उस हालत में तुम अपनी पत्नी को उसके यहाँ

से नहीं ला सकते।" हर बल ने अर्थलोभ से कहा।

तब अर्थलोभ ने राजा से जाकर शिकायत की कि सुखद नाम का एक विदेशी व्यापारी उसकी पत्नी को उठा ले गया था और इसलिए उसको उसे वापिस कर देना चाहिये। पर जो कुछ हुआ था, उसने राजा से नहीं कहा।

यह सोच कि उसके आदमी अर्थलोभ के साथ अन्याय हुआ था, राजा सुखद को सज़ा देने के लिए तैयार हो गया। पर मन्त्री ने उसे इस जल्दबाजी से रोका। "महाराज, सुखद एक विदेशी बड़ा व्यापारी है। बिना पूछताछ किये उसको सज़ा देना ठीक नहीं है।"

मन्त्री की सलाह पर, राजा ने सुखद के घर एक आदमी को यह जानने के लिए भेजा कि आखिर क्या हुआ था। उस आदमी से मानपरा ने जो कुछ हुआ था, वह बता दिया। राजा को आश्चर्य हुआ। राजा नहीं जानता था कि उसके यहाँ काम करनेवाले अर्थलोभ की, इतनी सुन्दर पत्नी थी, उसे देखने की इच्छा से राजा अर्थलोभ को साथ लेकर सुखद के घर गया।

राजा को देखते ही मानपरा राजा के पैरों पड़ी। जो कुछ हुआ था, उसे बताकर उसने पूछा—"आप ही बताइये कि इन दोनों में कौन मेरा असली पति है?"

राजा ने जब अर्थलोभ की ओर देखा, तो उसने कुछ न कहा। राजा ने मानपरा की बात सच मानकर कहा—"मैं भी मानता हूँ कि तुम्हारी बात सच है। जिसने तुम्हारे लिए इतना त्याग किया है, वह ही सचमुच तुम्हारा पति है।"

यह सुनते ही, अर्थलोभ ने अपमानित होकर क्रोध में कहा—"महाराज, मैं अपने

आदमियों को लेकर, मानपरा के लिए इस सुखद से लड़ूँगा। जो जीतेगा, मानपरा उसी की होगी। आप इसके लिए अनुमति दीजिये।"

"इसमें हमारे आदमियों के लड़ने की क्या ज़रूरत है? हम दोनों ही लड़ें और हम दोनों में जो जीते, मानपरा उसकी पत्नी बनेगी, यह पक्का हो जाये।" सुखद ने कहा।

राजा और मानपरा के सामने ही, अर्थलोभ और सुखद एक एक घोड़े पर सवार होकर हथियार लेकर युद्ध करने लगे। सुखद ने जब अर्थलोभ के घोड़े को भाले से भोंका, तो उसने अर्थलोभ को गिरा दिया। नीचे गिरे हुए अर्थलोभ को सुखद ने मारा नहीं परन्तु उसे फिर घोड़े पर सवार होने दिया। इस प्रकार चार बार अर्थलोभ घोड़े पर से नीचे गिर गया। हर बार सुखद उसे घोड़े पर फिर सवार ही नहीं होने देता बल्कि उसे हौसला भी देता गया। अर्थलोभ जब पाँचवी बार गिरा, तो घोड़े का खुर उसे लगा और वह बेहोश हो गया। उसके नौकर अर्थलोभ को उठाकर ले गये।

राजा ने सुखद का अभिनन्दन किया और उसका उचित रुप से सत्कार किया। फिर उसने अर्थलोभ के बारे में पूछताछ करवाई, यह जानकर कि उसने अपना सारा धन अन्याय से कमाया था, उसे अपने आधीन कर लिया और उसको अपने यहाँ से निकाल दिया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा मुझे एक सन्देह है। राजा ने क्यों अर्थलोभ और सुखद को लड़ने दिया? युद्ध से पहिले ही राजा मान गया था कि मानपरा सुखद की ही थी। युद्ध में अर्थलोभ के पराजित होने में और राजा के उसकी सम्पत्ति अपने आधीन करने में कोई सम्बन्ध नहीं दीखता? उस हालत में राजा उन दोनों के द्वन्द्व युद्ध के लिए क्यों मान गया? यदि तुमने इन प्रश्नों का जान बूझकर उत्तर न दिया, तो तुम्हारे सिर के टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे!"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"यह सिद्ध हो गया कि अर्थलोभ पैसे के मामले में नीच है। पर जब उसने सुखद के साथ युद्ध करने के लिए कहा, तो राजा ने यह जानने की कोशिश की कि कहीं उसमें शौर्य साहस हैं कि नहीं। यदि अर्थलोभ युद्ध में जीतता तो राजा मानपरा को उसे दिला देता और यही नहीं उसे अपनी नौकरी में भी रहने देता। पर अर्थलोभ में न वैश्य धर्म था, न क्षात्र धर्म ही। वह बिल्कुल शक्तिहीन था। उस जैसे के पास श्री सम्पत्ति नहीं रहनी चाहिए। इसलिए ही राजा ने उसको दण्ड दिया।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और फिर पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

इमली का पत्थर

एक गाँव में एक व्यापारी रहा करता था।

उसका परिवार बड़ा था और व्यापार छोटा। इसलिए वह एक कौड़ी भी व्यर्थ न खरचता। बड़ी सावधानी से पाई पाई बरतता। वह कभी कभी कस्बा जाकर माल खरीद कर लाया करता था। पर उनको गाड़ी पर लदवाकर मुख्य सड़क से न लाया करता। क्योंकि उस रास्ते पर चुँगी की चौकी थी। जो उस रास्ते से, कस्बे से बाहर जाते उन्हें वहाँ चुँगी देनी पड़ती। इस तरह गाड़ी और चुँगी के पैसे बचाकर वह उतना ही माल खरीदता जितना स्वयं ढो सकता था। वह माल को एक बोरे में डालकर, घूम फिरकर जंगल के रास्ते उसे ढोकर गाँव पहुँचता।

जंगल का रास्ता बड़ा तो था ही, साथ रास्ते में चोरों और जंगली जानवरों का भी भय था। लोग कहा करते थे कि जंगलों में भूत भी थे। फिर भी व्यापारी दिल कड़ा करके, उसी रास्ते जाया करता।

एक बार, जब वह बोरा ढोकर जंगल के रास्ते गाँव की ओर जा रहा था तो एक घने बढ़ के पेड़ के ऊपर से एक पिशाच उसके सामने कूदा। "मैं तुम्हें खा जाऊँगा" कहता उसकी ओर लपका।

व्यापारी क्षण भर के लिए चौंका। फिर ढ़ाढ़स करके कहा—"तो पिशाच ही हो, कहीं सुआ तो नहीं है, यह सोच मैं डर गया था।"

यह सुनकर पिशाच को बड़ा आश्चर्य हुआ। इस आदमी को पिशाचों का तो भय नहीं है। पर सुवे से डरता है।

रामस्वरूप

"कौन है वह सुआ? कभी उसका नाम सुना तक नहीं है। क्या वह मुझ से अधिक भयंकर है? कहाँ रहता है वह?" पिशाच ने पूछा।

"सुआ मामूली तौर पर इस जंगल में नहीं रहता है। फिर भी उसके रास्ते न आना। तुम केवल पिशाच ही हो। तुम हम जैसे को निगल ही सकते हो। पर सुआ ऐसा नहीं करता। वह मार मार कर बोटियाँ नोंच लेता है। वह बड़ा दुष्ट है।" व्यापारी ने कहा।

पिशाच को यह देख बड़ा गुस्सा आया कि इस आदमी का डरना तो अलग किसी और सुवे के बारे में कहकर मुझे ही डराने की कोशिश कर रहा है।

"मुझे उस सुवे को तुरत दिखाओ—।" पिशाच ने कहा।

"वह कहीं कस्बे में रहता है। यदि उसने तुम्हें देख लिया तो तुम्हें और मुझे खा जायेगा। इसलिए मैं तुम्हें अपने बोरे में रखकर, सुवे के पास ले जाऊँगा। तुम बोरे में से देखते रहना पर चूँ चाँ न करना" व्यापारी ने कहा।

उसने अपने बोरे में से और चीज़ें निकाल दीं। पिशाच को उसमें बिठाया।

बोरे को बांध दिया। उसे कन्धे पर डाल, कस्बे से बाहर निकल पड़ा। वह मुख्य सड़क पर चुँगीघर के पास जा रहा था कि चुँगीवालों ने पूछा—"क्या है उस बोरे में? ठहरो।" व्यापारी ने बोरा उतार कर कहा—"जी इमली है।"

चुँगीवाले ने, बोरे को तराजू में डालकर सुऐं से बोरे को दो तीन बार चुभा कर कहा—"इमली मालूम होती है। चार मन है। तो चार चवन्नी और एक रुपया चुँगी दो।"

व्यापारी ने चुँगी देदी, बोरा उठाकर, एक और रास्ते से, वह अपने माल के पास गया। बोरा खोला और भूत को छोड़ते हुए कहा—"देखी, सुवे की करामात। मैने रुपया दे दिया था। इसलिए ही तुम जीते जी बच सके।"

"बाप रे बाप भोंक भोंक कर उन्होने जान ही हैरान करदी। तुमने झूट मूट कह दिया था कि इमली है. इसी वजह से प्राण बचे। बताओ तुम्हारा क्या उपकार करूँ?" पिशाच ने पूछा।

"परिवार बड़ा है अगर तुम्हारे बस में हो तो पैसा दिलवाओ।" व्यापारी ने कहा।

"इसमें क्या रखा है? इस पेड़ की जड़ में बहुत-सा धन है। खोदकर ले जाओ।" कहकर पिशाच उठकर पेड़ पर जा बैठा।

व्यापारी ने जब पेड़ की जड़ में खोदा तो उसे ढेर-सा पैसा मिला। उसे बोरे में डाल वह जंगल के रास्ते अपने गाँव गया और आराम से रहने लगा।

विवाह का उपहार

पन्नालाल को सपरिवार कुछ दिनों के लिए अपने ससुराल जाना पड़ा। इसलिए उसने अपनी गौ और भैंस को पड़ोसवाले को देखने को दी और बछड़े को ग्वाले सुब्बु के यहाँ रखा।

पन्नालाल को बछड़ा वापस ले जाता देख मल्लिका की आँखें भर आईं। उसने सुब्बु से कहा—"लगता है बछड़ा तुम्हारे यहां बहुत हिल गया है।"

"जी, हां।" सुब्बु ने कहा।

"देखो सुब्बु, बछड़े के लिए तुम्हारा घर ही अच्छा रहेगा, तुम ही उसे रख लो।" पन्नालाल ने कहा।

"गरीब हूँ। बछड़े को खरीद नहीं सकता।" सुब्बु ने कहा।

"अरे तुमसे किसने खरीदने को कहा है? यूँ ही दे रहा हूँ। ले लो। अब से यह बछड़ा तुम्हारा है....तुम्हारा और मल्लिका का ठीक है न?" यह कहकर पन्नालाल अपने घर चला आया।

दिन बीतते गये। मल्लिका सयानी हो गई। उसके विवाह के दिन आ गये, बछड़ा भी बड़ा हो गया। अगर उसे बेचते, तो कोई भी उसे ले जाता। इसलिए बछड़ा बेचकर सुब्बु ने लड़की का विवाह करने की सोची। पन्नालाल भी इसके लिए मान गया।

जैसे ही मालूम हुआ कि सुब्बु बछड़ा बेचने जा रहा था, तो सोमू ने उसे खरीदने की ठानी। वह पन्नालाल को जानता था। यदि पन्नालाल को आड़ में रखकर सौदा किया गया, तो उसका ख्याल था कि बछड़ा सस्ता मिल सकता था।

"पन्नालाल, सुब्बु बछड़ा बेच रहा है। मैं उसे खरीदने की सोच रहा हूँ।" सोमू ने कहा।

"खरीद लो। मुझे कोई आपत्ति नहीं है, मैंने सुब्बु को वह बछड़ा दे दिया है और उसको बेचने बाचने के सब अधिकार भी दे दिये हैं।" पन्नालाल ने कहा।

"सौदा करने के लिए तुम भी मेरे साथ आओ। यह मेरे लिए और सुब्बु के लिए भी अच्छा है।" सोमू ने कहा।

पन्नालाल सोमू के साथ जाने के लिए मान गया। यदि उसके सामने ही सौदा पट गया, तो सुब्बु को भी सन्तोष होगा। दोनों मिलकर सुब्बु के घर गये। वे किस काम पर आये थे, यह जानकर सुब्बु ने पन्नालाल से कहा—"आप जितने में देने के लिए कहेंगे उतने में दे दूँगा।"

"बीच में भला मैं क्या कहूँ सुब्बु? वह बछड़ा तुम्हारा है। उसे तुम कितने में बेचना चाहते हो बता दो। यदि मर्ज़ी होगी तो खरीदेंगे, नहीं तो नहीं।" पन्नालाल ने कहा।

"यदि यही बात है तो बछड़े को सौ रुपये में बेच दूँगा। मैंने पाँच दस से इस

बारे में पूछकर भी देखा है। कह रहे हैं कि यह इसके लिए ठीक दाम ही है। नहीं तो आप कोई दाम बताइए। मैं उसी पर बिना कुछ कहे सुने दे दूँगा।" सुब्बु ने पन्नालाल से कहा।

सोमू ने पन्नालाल को अलग ले जाकर कहा—"कहो, कि पचास रुपये में दे दे। कह तो रहा है कि जितना दाम तुम बताओगे, उतने में वह दे देगा।"

"यदि दाम अधिक हो तो मत खरीदो। पर मैं उससे कैसे कहूँ कि वह इतने दाम पर उसे बेचे?" पन्नालाल ने पूछा।

"तो तुमसे मेरा क्या भला हुआ?" सोमू ने पूछा।

"वह तो तुम्हें मालूम होगा! यदि मैं नहीं आता तो शायद वह इससे भी अधिक दाम बताता। अगर यह तुम्हें न भाता हो तो तुम न खरीदो।" पन्नालाल ने कहा।

"मैंने सोचा था कि तुम मदद करोगे बस करो।" सोमू ने कुछ झिड़क कर कहा।

पन्नालाल ने सुब्बु के पास आकर कहा—"सुब्बु, सोमू को तुम्हारा दाम मंजूर नहीं है। एक काम करो। तुम यह बछड़ा मुझे ही सौ रुपये में दे दो और लड़की की शादी करदो।" उसने कहा।

"आप ही का बछड़ा आपको कैसे बेचूँ! चाहें तो आप इसे मुफ्त ले जाइए। लड़की की किसी न किसी तरह हम शादी कर लेंगे। शादी की वैसे कोई जल्दी भी नहीं है। अभी तो रिश्ता भी ठीक नहीं किया है। पैसा हाथ में लेकर रिश्ता ढूँढ़ने की सोची थी। आपके दिये हुये बछड़े से ही यह शादी तय होगी। यह मेरा विश्वास है।" सुब्बु ने कहा।

वे दोनों जब बातें कर रहे थे, तो रामू उस तरफ आया। "क्या बात है?" उसने पूछा, पन्नालाल ने सब कुछ बता दिया। रामू ने बछड़ा देखकर कहा—"हाँ यह बछड़ा सौ रुपये का है और कोई इसे क्यों खरीदें! मैं ही इसे खरीद लूँगा। यह लो दस रुपये पेशगी के तौर पर। बाकी कल आकर दे दूँगा।" उसने सुब्बु को दस रुपये दिये।

सोमू के मालूम हुआ कि सुब्बु के बछड़े का सौदा पट गया था। अगले दिन वह सौ रुपये लेकर सुब्बु के घर गया। "यह लो कल जैसे हमने तय किया था उसके

मुताबिक मैं सौ रुपये ले आया हूँ। बछड़ा दे दो।"

सुब्बु ने उससे कहा—"पन्नालाल ने मुझसे कहा था कि आपको दाम पसन्द न था। इस लिए मैंने रामू जी को बेच दिया और दस रुपये मैंने पेशगी भी ले लिए हैं।"

"यहाँ अभी सौदा हो रहा था कि तुमने दूसरी ओर रामू को बछड़ा बेच भी दिया? वाह, खूब। तुम्हारे दाम कहते ही यदि तुम्हारे हाथ में सारा रुपया रख दूँ तभी क्या सौदा पटा माना जाता है? क्या मैंने तुमसे कहा था कि मुझे तुम्हारा बछड़ा चाहिए ही नहीं? सोमू ने कहा।

"आप और पन्नालाल जी ने अलग जाकर कुछ बात की। आप फिर आये ही नहीं, चले गये। पन्नालाल जी ने बाद में आकर बताया कि आपको दाम मंजूर न था। तब भला मुझे कैसे मालूम होता कि आपको बछड़ा पसन्द आ गया है और आप उसे खरीदना चाहते हैं?" सुब्बु ने कहा।

"कहाँ है वह पन्नालाल?" अभी सोमू कह ही रहा था कि रामू पन्नालाल को साथ लेकर उस तरफ़ आया।

जिस तरह का सौदा तुम पटा रहे थे, वह तो मैंने कहीं भी नहीं देखा है। जब तुमने दाम अधिक बताये थे, तब भी तुमने कुछ न कहा। जब उसी दाम पर आज ले जाने की सोची थी, तो उसी समय यह बात क्यों न कही थी?" पन्नालाल ने कहा।

"ख़ैर, वह मेरी ही ग़लती है, पर अभी तो बछड़ा नहीं ख़रीदा गया है। ऊपर से और दस रुपये देता हूँ। बछड़ा मुझे ही दिला दो।" सोमू ने पन्नालाल से कहा।

"सुनता हूँ कि तुमने सुब्बु से कहा था कि मैं बछड़ा नहीं खरीदना चाहता हूँ। यह देखो मैं रुपये ले आया हूँ। बछड़ा मुझे दे दो।" सोमू ने पन्नालाल से कहा।

"तुम मुझे बुरा भला कहकर चले गये थे। यह भी न कहा था कि तुम इस बारे में सोच रहे हो। मैं कैसे समझूँ कि सौदा पट रहा है? रामू ने शुरु से ही इसे खरीदने की सोची। उसने बछड़ा देखा। दाम मालूम किया और पेशगी भी दे दी। उस जैसे के लिए अगर दस दिन ठहरना भी पड़ जाये, तो कोई मतलब है?

रामू को गुस्सा आ गया। उसने पन्नालाल से कहा—"पन्नालाल, तो यह खेल खेल रहे हो तुम? हम दोनों में होड़ कराके मज़ा देखना चाहते हो?"

"तो यह बात है?" सोमू ने पूछा।

"बाबू....मैं अपना बछड़ा आप में से किसी को नहीं बेचूँगा। रामू जी। क्यों आप फ़िज़ूल पन्नालाल जी को बुरा भला कहते हैं? आपने जो दस रुपये दिये थे, उसे दिये देता हूँ। आप जाइये।" कहकर उसने घर में से दस रुपये लाकर, रामू को दे दिये।

सोमू और रामू पन्नालाल को तरेरते चले गये। इतने में मल्लिका ने आकर कहा—"पिताजी, पिताजी, कोई लड़का भागा भागा हमारे गौवों के छप्पर में आया है! कह रहा है कि अगर कोई पूछे तो बताना मत।"

तभी एक आदमी उस तरफ गया। उसने पन्नालाल को देखकर पूछा—"क्या इस तरफ हमारा लड़का आया था। क्या आपने किसी को देखा था?"

"उसने क्या किया है? क्यों वह भाग आया है?" पन्नालाल ने पूछा।

"मेरा लड़का है। बहुत जिद्दी है। घर से पैसे लेकर निकला है। मैं उसका पीछा करता आ रहा हूँ।" उस आदमी ने कहा।

तब सुब्बु एक लड़के का हाथ पकड़कर वहाँ लाया।

उसका नाम मुकुन्द था। उसका पिता कुली मज़दूरी करके ज़िन्दगी बसर करता था और मुकुन्द बिना काम धाम के आवारागिर्दी करता था। एक पैसे की आय नहीं है और वह शादी करना चाहता है। अगर शादी भी कर ली, जो अपना

पेट ही न भर सके, भला वह पत्नी का पेट कैसे भरेगा? इसलिए पिता ने उसे खूब डाँटा फटकारा था, उसका अपमान किया था। उसे गुस्सा आ गया। उसने कहा—"मैं पैसा कमा सकता हूँ। तुम्हें मुझे पालने पोसने की कोई जरूरत नहीं है।" घर में रखा जो थोड़ा बहुत रुपया था, उसे लेकर घर से भाग आया।

पन्नालाल ने मुकुन्द को गौर से देखा। लड़का अच्छा ही दीखता था। उसमें पौरुष है। यदि रोजी रोटी का रास्ता मिल गया तो वह भी सुधर सकता है।

पन्नालाल सुब्बु को अलग ले गया। "यदि तुमने इसके साथ अपनी लड़की का विवाह कर दिया, तो कैसे रहेगा?"

"वह अपनी पत्नी को कैसे खिलायेगा पिलायेगा?" सुब्बु ने पूछा।

"उसके लिए भी कोई रास्ता ढूँढ़ निकाल लेंगे। शादी के तोहफ़े के तौर पर मैं एक गाड़ी बनवाकर दे दूँगा। बछड़ा तुम्हारे पास है ही, गाड़ी चलाकर वह कुछ न कुछ तो कमायेगा ही। तुम उसे अपना दिया हुआ दहेज समझो। यदि शादी के लिए पाँच दस रुपये चाहिए, तो मैं दे दूँगा।" पन्नालाल ने कहा।

सुब्बु को यह बात खूब जंची। मुकुन्द के पिता को भी लगा कि उसके लड़के को सुधारने के लिए इससे अच्छी बात न हो सकती थी। मुकुन्द और मल्लिका की शादी हुई। पन्नालाल ने वधु को गाड़ी दी। मुकुन्द गाड़ी चलाना सीख गया।

मल्लिका भी बड़ी खुश थी, कि जिस बछड़े को उसने पाल पोसकर बड़ा किया था वह उसके साथ ही था।

निश्चयदत्त की कथा

उज्जयिनी नगर में निश्चयदत्त नाम का एक वैश्य युवक रहा करता था। वह जुये में बड़ा तेज़ था। जुये में पैसा जीत कर वह ब्राह्मणों और गरीब अनाथों में बाँट देता था।

वह रोज सिप्रा नदी में स्नान करके, महाकाल के मन्दिर में जाता। पूजा करता। फिर पास के श्मशान में जाता। शरीर पर चन्दन लगाता और वहाँ के पत्थर के खम्भे पर चन्दन लगाता और उस पर अपनी पीठ रगड़ा करता।

एक दिन कोई शिल्पी उस श्मशान की ओर गया। उस खम्भे को चिकना पाकर, उसने उस पर गौरी की मूर्ति गढ़ी।

इसके कुछ देर बाद एक विद्याधरी वहाँ आयी। उसने महाकाल की आराधना की। खम्भे पर गौरी की मूर्ति खुदी देखकर उसने सोचा कि उसमें गौरी रहती होगी। वह भी उस खम्भे में घुसकर विश्राम करने लगी।

इतने में निश्चयदत्त अपने नृत्य कृत्य पूरे करके, खम्भे के पास चन्दन लगाने आया तो वहाँ गौरी की मूर्ति खुदी देखकर उसे आश्चर्य हुआ। उसने खम्भे के दूसरी ओर चन्दन लगाया और उससे अपनी पीठ रगड़ली।

खम्भे में रहनेवाली विद्याधरी ने यह देखकर सोचा—"कितना सुन्दर युवक है! इसकी पीठ पर चन्दन लगानेवाला भी कोई नहीं है।" उसने उस पर दया करके अपना हाथ बाहर निकाला और उसकी पीठ पर चन्दन लगाने लगी। उसके

स्पर्श से और चूड़ियों की आवाज़ सुनकर, वह पुलकित हो उठा और उसने झट उसका हाथ पकड़ लिया।

"अरे मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? मेरा हाथ छोड़ दो।" विद्याधरी ने खम्भे में से कहा।

"जब तक तुम मेरे सामने आकर यह नहीं कहते कि तुम कौन हो, मैं तुम्हारा हाथ नहीं छोड़ूँगा।" निश्चयदत्त ने कहा।

विद्याधरी खम्भे में से बाहर आयी। उसके सामने बैठकर अपना वृत्तान्त यूँ सुनाने लगी।

हिमालय की एक चोटी पर पुष्करावती नामक नगर का विद्याधर नाम का विद्याधर राजा था। वह उसकी लड़की थी। नाम अनुरागपरा था। वह महाकाल की अर्चना करने आयी थी। इस खम्भे में विश्राम कर रही थी कि निश्चयदत्त को देखते ही वह उससे प्रेम करने लगी। इसीलिए ही उसने उसकी पीठ पर चन्दन लगाया था।

यह कहकर उसने विदा ली।

"दुष्ट कहीं का, मेरा मन लेकर उसे वापिस किये बिना तुम कैसे जा सकती हो?" निश्चयदत्त ने पूछा।

"यदि तुम हमारे नगर आये तो मैं तुम्हारी पत्नी बनूँगी। अगर तुम वहाँ जाना चाहोगे, तो रास्ता भी मालूम हो जायेगा।" कहकर वह आकाश की ओर उसकी तरफ़ प्रेम से देखती उड़ी।

अनुरागपरा को भूलना सम्भव न था। भले ही असम्भव हो पुष्करावती नगर जाना ही होगा। प्रयत्न करने पर हार जाना उसे स्वीकार था, पर प्रयत्न किये बिना रहना उसे गँवारा न था। यह सोच वह उत्तर दिशा की ओर चल पड़ा।

रास्ते में उसे तीन और वैश्य युवक दिखाई दिये। चूँकि वे भी उत्तर की ओर ही जा रहे थे, इसलिए चारों साथ चलने लगे।

कुछ दूर जाने के बाद, वे ऐसे देश में पहुँचे, जहाँ ताजिक जाति के लोग रहा करते थे। ताजिकों ने इन चारों को पकड़ लिया और उन्हें एक धनी ताजिक को बेच दिया।

और उस धनी ने अपने आदमियों के साथ, अपने राजा के पास उन्हें नज़राना के तौर पर भेज दिया।

जब वे ताजिक राजधानी के पास पहुँच रहे थे, तो संयोगवश वहाँ का राजा मर गया।

इसलिए ताजिक के आदमियों ने मृत राजा के लड़के से कहा—"हमारे मालिक ने इन गुलामों को आपके पिता के पास नज़राने के तौर पर भेजा है। इसलिए इन्हें आप ही स्वीकार कीजिये।" उन्होंने निश्चयदत्त और उसके साथियों को यह कहकर राजा के लड़के को सौंप दिया।

"जब मेरे पिता जी की समाधि बनायी जायेगी, तो उनके शव के साथ इन चारों की भी समाधि बना दी जाये। आज रात इनको पकड़कर कैद में डाल दो।" राजा के लड़के ने अपने सिपाहियों को आज्ञा दी।

सिपाहियों ने उन चारों को पकड़कर एक झोंपड़ी में रखा। बाकी तीनों को डर के मारे काँपता देख निश्चयदत्त ने कहा—"क्या डरकर काँपने से आपत्तियाँ टल जाती हैं? जब मरना ही है, तो क्यों नहीं हँसते हुए मरते? नहीं तो सब की रक्षा करनेवाली उस महा दुर्गा की प्रार्थना करो।" कहकर महादेवी की प्रार्थना करके वह निश्चिन्त हो आराम से सो गया।

डर अधिक बढ़ता जायेगा। अभी अभी हम एक आफ़त से निकले हैं। हम दक्षिण की ओर चले जायेंगे।"

"अच्छा, जैसी तुम्हारी मर्जी।" उनसे विदा लेकर, निश्चयदत्त अनुरागपरा के दर्शन को ही अपना लक्ष्य मान कर उत्तर की ओर चलता गया।

वितस्ता' नदी के पास उसे शाक्तेय दिखाई दिए। सबने मिलकर वितस्ता नदी पार की। सूर्यास्त के समय भोजन करके, वे आगे चल कर एक जंगल में पहुँचे।

उस समय कुछ लकड़हारे लकड़ी काटकर, जंगल से जाते हुये उन्हें दिखाई दिये। "कहाँ इस तरफ़ जा रहे हो? अन्धेरा हो रहा है। आस पास कोई गाँव नहीं है। इस जंगल में एक उजड़ा शिवालय अवश्य है। परन्तु रात तुम उसमें भी न काट सकोगे? चूँकि इस जंगल में श्रृंगोत्पादिनी नाम की एक यक्षिणी रहती है। जो आदमी उसकी आँखों में आ जाता है उसके सिर पर सींग उग आते हैं। वह उन्हें पशु बना देती है और उनको खा जाती है।"

उसे स्वप्न में देवी दिखाई दी और उसने उससे कहा—"मैंने तुम्हारे बन्धन तोड़ दिये हैं, तुम छूटकर भाग जाओ।" चारों यह बात सुनकर एक साथ उठे और अपने बन्धनों को सचमुच कटा देख, वे बड़े खुश हुए।

अभी रात कुछ बाकी थी। वे रात ही रात उस झोंपड़ी से निकले और सवेरा होते होते बहुत दूर निकल गये।

निश्चयदत्त उत्तर की ओर चलता जाता था। परन्तु उसके साथियों ने कहा—"अगर उस तरफ़ गये तो म्लेच्छों का

परन्तु शाक्तेयों ने इसकी परवाह न की। उन्होंने निश्चयदत्त से कहा—"हम हमेशा श्मशान में ही रहते हैं। इस तरह की यक्षिणियाँ हमने कितनी ही देखी हैं। हम इस यक्षिणी को देखकर डरनेवाले नहीं है।" कहकर वे शिवालय की ओर चल पड़े। निश्चयदत्त भी न न कर सका। वह भी उनके साथ चल दिया।

शिवालय में जाकर शाक्तेयों ने राख से एक घेरा बनाया। उसके अन्दर गये और उसमें आग बनाई। और उसमें ईन्धन डालते वे मन्त्र जपने लगे।

कुछ रात बीत जाने के बाद, कंकाल किन्नरी बजाती शृंगोत्पादिनी उस तरफ़ आयी। वह घेरे से दूर रही। उसने नृत्य करते हुए, एक शाक्तेय की ओर घूरकर देखा और वह मंत्र भी पढ़ा, जिससे सींग पैदा होते थे। इस कारण उस शाक्तेय के सिर पर सींग उग आये।"

शाक्तेय उठा और खुशी से गाता नाचता वह आग में जा गिरा। यक्षिणी ने उसे आग में से निकालकर खा लिया।

इस प्रकार यक्षिणी ने एक के बाद एक तीनों शाक्तेयों के सींग उगवाये और जब

वे नाचते नाचते आग में गिरे तो उनको भूनकर उसने खा लिया। चूँकि उसने तीन आदमियों को खा लिया था, शायद इसलिए ही उसे थोड़ी-से बेहोशी आई और उसने अपनी कंकाल किन्नरिनी को नीचे रख दिया।

तुरन्त निश्चयदत्त एक छलांग में यक्षिणी के पास गया और उसने कंकाल किन्नरिनी को उठा लिया। क्योंकि सींग उगानेवाला मन्त्र चार बार सुना था, इसलिए उसे वह कंठस्थ हो गया था। यक्षिणी की ओर देखते हुए एकाग्रचित्त हो वह धीमे धीमे मन्त्र पढ़ने लगा।

यक्षिणी के सिर पर सींग उगने लगे। वह डर गई। उसने निश्चयदत्त के पैरों पर पड़कर कहा—"महानुभाव, मन्त्र न पढ़ो। स्त्री हूँ। दया करो। रक्षा करो। जो तुम चाहोगे वह मै करूँगी। अगर तुम चाहो तो तुम्हें अनुरागपरा के पास भी पहुँचा दूँगी।"

यक्षिणी की यह बात सुनकर निश्चयदत्त ने मन्त्र पढ़ना बन्द कर दिया और उसने अपने मन्त्र को वापिस ले लिया।

यक्षिणी ने उसको अपनी पीठ पर सवार किया, आकाश में उड़कर, सवेरा होने से पहिले वह पुष्करावती पहुँच गई।

अनुरागपरा ने अपनी दिव्य शक्तियों द्वारा पहिले ही जान लिया था कि उसका प्रियतम आ रहा था। उसकी अगवानी करने वह अपने पिता के घर से गई।

निश्चयदत्त, अनुरागपरा से विवाह करके पुष्करावती नगर में ही रहने लगा।

बन्दरों का काम

एक गांव में एक बूढ़ा रहा करता था।

एक दिन वह पत्नी की दी हुई खाने की पोटली लेकर, पहाड़ पर घास काटने गया। वह पोटली एक टहनी से बाँधकर घास काटने लगा।

वह घास काटकर, थोड़ी देर सुस्ताने जो बैठा, तो कहीं से बन्दरों का एक झुन्ड आया और टहनी पर लटके उसके खाने को वे खा गये।

बूढ़ा यह सब, बिना हिले डुले, कहे कहाये देखता रहा। बन्दरों ने उसे कोई मूर्ति समझा। वे सब मिलकर उसके पास गये। उसको उठाकर पास के एक उजड़ मन्दिर में ले गये और उसके वहां सीढ़ियों पर बिठा दिया। जाने से पहिले वे कुछ पैसे कहीं से लाये, उन्हें बूढ़े के सामने डालकर अपने रास्ते चले गये।

तब तक बूढ़ा आँखें बन्द किये बिना हिले बैठा रहा। उन बन्दरों ने देखा होगा कि आते जाते लोग वहाँ की मूर्ति के सामने पैसे डालते हुए देखा होगा। उन पैसों को ले जाकर उन्होंने कहीं सुरक्षित रखा होगा और अब उन्होंने उन्हें बूढ़े को दे दिया।

बन्दरों के चले जाने के बाद, बन्दरों की बुद्धि देखकर, बूढ़ा हँसा। कुछ भी हो, उसे उस दिन अपना भाग्य अच्छा लगा वह उन पैसों को उठाकर चल पड़ा।

रास्ते में उसने अपने लिए और अपनी पत्नी के लिए नये कपड़े खरीदे। घर

सुरेन्द

जाकर बाकी पैसे दे दिये और उनसे बढ़िया पकवान बनवाकर खाये।

वे भोजन कर रहे थे कि पड़ोस की बुढ़िया आयी। उसने आश्चर्य से पूछा—"क्या खास बात है आज? दोनों नये कपड़े पहिनकर त्यौहार मना रहे हैं।"

बूढ़े की पत्नी ने, बुढ़िया को भी पकवान खिलाये और उसे बन्दरों की कहानी सुनाई।

बुढ़िया यह सुनकर जल्दी जल्दी अपने घर गई। अपने पति से बन्दरों की बात कही। "तुम भी क्यों नहीं जाते और बन्दरों को दिये हुए पैसे लाते हो?" बुढ़िया का पति इस के लिए मान गया।

अगले दिन बुढ़िया ने अपने पति को खाने की पोटली दी। वह भी उसे लेकर जंगल गया और उसे पेड़ की टहनी से बांध दिया और पेड़ के नीचे स्थिर हो बैठ गया।

थोड़ी देर में बन्दर आये और उन्होंने खाना खा लिया। वे मूर्ति की तरह बैठे बुढ़िया की पति के पास आये और उसे उठाकर ले जाने लगे।

बुढ़िया के पति को उनके कारनामे देखकर हँसी आ गई। वह जोर से हँसा ही नहीं, आँखें फाड़ फाड़कर देखने भी लगा। यह देख, बन्दरों को बड़ा गुस्सा आया। उन्होंने उसे नीचे छोड़ दिया। उसे मारा खरोंचा। बाल खींचे और उछलते कूदते चले गये।

जब मरते मरते बचकर पैर घसीटता घसीटता उसका पति घर आया, तो उसकी पत्नी, पुराने कपड़े जलाकर, नये कपड़ों की प्रतीक्षा करती बैठी थी।

शंख ध्वनि

अरावली प्रान्त में शंखचूड़ नाम का एक सुन्दर राज्य था। उस पर राजपूतों का शासन था। वहाँ के किले के बुर्ज में एक छोटा-सा शिवालय था और शिवलिंग के सामने एक बड़ा शंख था।

वह शंख राज्य के अधिपति के बजाने से ही बजता था। उसके उत्तराधिकारियों के बहुत प्रयत्न करने पर भी उसमें से ध्वनि नहीं आई थी....ऐसी प्रसिद्धि है।

उत्तर देश में जब हिन्दू मुसलमानों में झगड़ा हो रहा था, तो शंखचूड़ के अधिपति ने राजपूतों से मिलकर युद्ध करने का निश्चय किया। वह अपने भाई कृपाण सिंह को भी साथ ले गया। उनकी सेनाएँ किले से बाहर कूच के लिए तैयार थीं। भाइयों के घोड़े भी द्वार के पास तैयार थे।

उस समय रणसिंह अपने भाई को साथ लेकर सीढ़ियाँ चढ़कर बुर्ज पर गया। शिवालय में शिवलिंग के समक्ष उसने झुककर नमस्कार किया। खड़े होकर उसने उठकर शंख बजाया। शंख में से अद्भुत ध्वनि आई। चारों ओर वह संचरित हुई। राज्य के प्रत्येक प्राणी को वह सुनाई दी। सब पुलकित हुए।

रणसिंह ने शंख बजाना समाप्त कर उसे यथास्थान रख दिया। उसने अपने भाई कृपाण सिंह से कहा "भाई यदि मैं युद्ध में मार दिया जाऊँ, तो तुम यहाँ आना और इस शंख को बजाना। और यथेच्छ राज्य करना।"

कृपाणसिंह ने चारों ओर देखा। उस किले के बुर्ज से दूर तक दिखाई देता

लिए एक ही रुकावट थी....उसके बड़े भाई के प्राण।

रणसिंह बड़ा साहसी और शूर था। वह युद्ध भूमि से जीवित नहीं आयेगा। यदि मुसलमानों की शक्ति अधिक रही, तो वह अवश्य मरकर रहेगा। परन्तु कृपाणसिंह उसकी मृत्यु को निश्चित कर देना चाहता था। वह मुसलमानों से नहीं लड़ना चाहता था....भाई ने बुलाया था, इसलिए लाचार हो जा रहा था। भाई जब मर जायेगा, उसी समय घर वापिस आकर वह अपना पट्टाभिषेक करवाना चाहता था। भाई का मरना कोई बड़ी बात न थी, रात को वह स्वयं उसे कत्ल कर सकता था। परन्तु ऐसा करने से सन्देह होगा। यदि धन का लालच दिया गया तो ऐसा काम करने के लिए कई नीच सैनिक मिल जायेंगे।

ऐसे तीन आदमी कृपाणसिंह को अपनी सेना में दिखाई दिये। उसने उनको पैसा देकर हुक्म दिया कि वे उसके भाई को मार दें और उसके शव को कहीं छुपा दें।

था। जहां तक नज़र गई, वहां तक सुन्दर पहाड़ और घाटियाँ थीं। सुन्दर सुन्दर जंगल और छोटी छोटी झीलें थीं। कृपाणसिंह को लगा कि उतना सुन्दर देश कहीं न होगा।

दोनों भाई बुर्ज पर से उतर आये। घोड़ों पर सवार होकर अपनी सेनाएँ लेकर उदयपुर की ओर चल पड़े।

कृपाणसिंह मुसलमानों से होनेवाले युद्ध के बारे में नहीं सोच रहा था। वह सोच रहा था कि क्या अच्छा हो अगर वह ही शंखचूड़ का राजा हो जाये। इसके

उसके कुछ दिन बाद, जब राजपूत सेनाएँ यमुना के किनारे पड़ाव किये हुई थीं एक दिन कृपाणसिंह के आदमियों ने आकर बताया कि उन्होंने काम पूरा कर दिया था।

"राजा जब तम्बू में सो रहे थे, तो हमने उनको मार दिया और उनके शव को यमुना में फेंक दिया।" उन्होंने कृपाणसिंह को बताया। कृपाणसिंह ने उनको और रुपया देकर भेज दिया।

अगले दिन रणसिंह के बारे में छावनी में शोर शराबा हुआ। वह अपने तम्बू में नहीं था। जिस बिस्तर पर वह लेटा हुआ था, उस पर खून ही खून था। जब सब को रणसिंह की हत्या के बारे में मालूम हो गया, तो कृपाणसिंह ने यूँ दिखाया, जैसे वह बहुत दुखी हो। वह सेनापतियों के पास गया। उनसे कहा—"मुझे अपनी सेना के साथ वापिस जाने की अनुमति दीजिए। नहीं तो वहाँ अराजकता पैदा हो जायेगी।" उनकी अनुमति लेकर अपनी सेना के साथ वह शंखचूड़ वापिस चला आया।

रणसिंह की मृत्यु की बात सुनकर देशवासी बड़े दुःखी हुए। "भाई की आज्ञानुसार मैं ही पट्टाभिषेक करूँगा।" कहकर, उसने अपने भाई की, विधि के अनुसार उत्तरक्रियायें की। और यह होते ही वह पट्टाभिषेक की तैयारियाँ करने लगा।

जब से वह वापिस आया था, पूजा के बहाने रोज़ वह बुर्ज़ पर जाता, और शंख बजाने का प्रयत्न करता। पर उसमें से हवा तो निकलती, लेकिन आवाज़ न निकलती। इसलिए उस शंख के बारे में उसने किसी से न कहा। राज पुरोहित ने कहा कि लाँछन के रूप में राज सिंहासन पर बैठने से पूर्व उसे शंख बजाना होगा, पर कृपाणसिंह ने उसे यह कहकर टाल दिया कि वह बहुत पुराना कर्मकाण्ड था। चूँकि वह सचमुच राज्य का उत्तराधिकारी था, इसलिए किसी ने कोई आपत्ति भी न की।

पट्टाभिषेक का दिन आया। बड़े वैभव के साथ वह मनाया गया। बड़े बड़े जलूस निकाले गये। दावतें दी गईं। खेल कूद हुए। उस दिन रात को राज्य के प्रमुख और अतिथि दावत में बैठे थे। कृपाणसिंह के आनन्द की सीमा न थी।

इतने में शंख की ध्वनि सुनाई दी। झट दावत की रौनक ठंडी पड़ गई। सब ध्यान से शंख की ध्वनि सुनने लगे। कृपाणसिंह का खून यकायक मानों जम-सा गया।

"महाराजा ने ही...." किसी ने कहा। किसी को कोई सन्देह न हुआ। वे पट्टाभिषेक भूल गये। दावत से उठकर भागने लगे। किले के बुर्ज पर, शिवालय

के सामने रणसिंह को उन्होंने शंख बजाते देखा।

रणसिंह बुर्ज पर से उतर आया। अपने लोगों से मिलकर उसने कहा—"हाँ, मैं ही हूँ। अभी जीवित ही हूँ। जिन्होंने मुझे मारने की कोशिश की थी, उन्होंने अच्छा किया कि मुझे नदी में धकेल दिया। ठंडे पानी की वजह से मैं जल्दी होश में आ गया। कुछ जंगलियों ने मुझे पकड़ लिया और उन्होंने मेरी चिकित्सा की। हत्यारों को भी मैंने आसानी से पकड़ लिया। मुझे मरा जान मूर्ख बड़े मजे से जिन्दगी बसर करने लगे। उन तीनों को मार कर अब मैंने बदला ले लिया है।" रणसिंह ने अपने मन्त्रियों को बताया।

"महाराज, यह सब घोर अन्याय किसने करवाया है? किसमें हत्यारों को पैसा देकर आपको मरवाने का साहस था?" उन्होंने पूछा।

रणसिंह ने चारों ओर देखा। जब उसने भीड़ में अपने भाई कृपाणसिंह को न देखा, तो कहा—"कोई भी हो, उसका पश्चात्ताप ही उसको जीवन भर सतायेगा। उसे अलग दन्ड की ज़रूरत नहीं है।"

सब मिलकर फिर भोजनशाला की ओर गये। वहाँ कृपाणसिंह न था। जैसे ही यह मालूम हुआ कि उसका भाई वापिस आ गया था वह किसी और रास्ते किला पार करके कहीं चला गया।

अगले दिन रणसिंह के गौरव के लिए एक और उत्सव हुआ। सब को मालूम हो गया कि कृपाणसिंह भातृद्रोही था। उसका नाम किसी ने न लिया।

चूहे की मदद

शंकराचार्य जब अद्वैत का ज्ञान प्रसार कर रहे थे, तो चिदानन्द नामक ब्रह्मचारी सन्यासी ने अपने शिष्यों के साथ अद्वैत का अध्ययन करने का निश्चय किया। परन्तु न चिदानन्द स्वामी संस्कृत जानता था, न उसके शिष्य ही। इसलिए एक गाँव में जाकर, एक महपंडित से सविनय उन लोगों ने संस्कृत सिखाने के लिए कहा।

पंडित ने कहा कि संस्कृत सिखाने के लिए उसको कोई आपत्ति न थी। पर उसके हाव-भाव से लगता था, जैसे किसी बात पर उसे सन्देह हो रहा हो।

"यदि आपको मुझे और मेरे शिष्यों को संस्कृत सिखाने में कोई आपत्ति हो तो साफ साफ बताइये।" चिदानन्द स्वामी ने पूछा।

"और कोई आपत्ति नहीं है। हमारे प्रान्त में दुर्भिक्ष है। यहाँ तुम लोगों को कम से कम एक वर्ष तक संस्कृत का अध्ययन करना होगा। एक साल तक हमारे गाँव के लोग भिक्षा देकर तुम्हारा पालन पोषण कर सकेंगे; इस बारे में मुझे सन्देह हो रहा है।"

"इसमें क्या है ! जैसी भगवान की इच्छा होगी वैसा ही होगा।" स्वामी ने कहा।

ग्राम के एक सिरे पर एक छोटा सा मठ था। चिदानन्द स्वामी, अपने शिष्यों को लेकर उस मठ में पहुँचा। पंडित वहाँ रोज आता और उनको संस्कृत सिखाकर चला जाता। स्वामी के शिष्य दिन में, गाँव में जाकर, जो कुछ भिक्षा मिलती उसे ले आते उसे सब आपस में बाँटकर

खा लेते। स्वामी, रात के समय शिष्यों को वह पाठ सिखाता, जो उसने खुद सीखा था इस प्रकार अध्ययन और भी जोर शोर से चलने लगा।

इस प्रकार एक सप्ताह हो गया। एक रात जब चिदानन्द स्वामी अपने शिष्यों को संस्कृत सिखा रहा था तो कहीं से कोई छोटा-सा चूहा आया और स्वामी के पास धान का एक दाना रखकर चला गया। कुछ देर बाद वह फिर आया और फिर स्वामी के पास धान का एक दाना रखकर चला गया।

दो तीन घड़ी में वह यूँ चार पाँच बार आया और हर बार स्वामी के सामने एक दाना रखकर चला गया।

"यह बड़ा विचित्र है, जरूर इसके पीछे भगवान का हाथ है।" यह कहकर, चिदानन्द स्वामी दिया लाया। मठ के बाहर गया और यह देखने लगा कि वह चूहा किस ओर जा रहा है। अन्तिम बार जब चूहा धान का दाना रखने आया तो मठ के पास के छेद से ऊपर आकर बहुत दूर तक भूमि पर भागता रहा। अन्त में, एक छेद में घुसकर अदृश्य हो

गया। फिर उसका कहीं पता न लगा, वह छेद ऊबड़ खाबड़ टीलों के बीच में था।

अगले दिन प्रातःकाल चिदानन्द स्वामी पंडित के पास गया। जो कुछ उसने रात को देखा था वह सब पंडित को बताया। "जब निर्जन प्रदेश से यह धान ला रहा है, तो अवश्य इस बात की जाँच पड़ताल की जानी चाहिए। ग्रामाधिकारी से बात करके भूमि खुदवाने के लिए पाँच दस आदमियों को लगवाइये।"

पंडित, ग्रामाधिकारी के पास गया। जो कुछ स्वामी ने उससे कहा था, उसे बताया। ग्रामाधिकारी, खोदने के उपकरण लेकर मठ के पास आया। चिदानन्द स्वामी उन सब को मठ के पीछे ले गया। पिछली रात जहाँ चूहा घुसा था, वह जगह दिखाकर उसने उसे खोदने के लिए कहा।

एक घंटा खोदने के बाद उनको एक घर के खंड़हर दिखाई दिये। वह बहुत बड़ा मकान रहा होगा। उस मकान के एक बड़े कमरे में उनको ढ़ेर-सा धान दिखाई दिया और उस धान पर बैठा एक छोटा चूहा अपना पेट भर रहा था।

ग्रामाधिकारी, बिना देरी किये, वह सारा धान गाँव ले गया। घरों में कुछ बाँट दिया और जो बच गया उसे ले जाकर, उसने कोठरियों में रखवा दिया। इस प्रकार उन गाँववालों के लिए उस साल अकाल जाता रहा। अगले साल अच्छी वर्षा हुई और परिस्थितियाँ ही बदल गईं।

कृष्णावतार

कालिन्दी के किनारे ग्वालों का एक गाँव था। वहाँ गौव्वें, बछड़े और बैल वगैरह, सब थे। स्त्रियाँ तरह तरह के कामों में लगी रहतीं। बड़ी रौनक रहती। वसुदेव के कहने पर नन्द अपने परिवार के साथ उस गाँव में पहुँचा। वहाँ के बुजुर्गों ने जाकर उसकी अगवानी की। नन्द ने भी उनसे कुशल प्रश्न किये। सबको उसने उनके नामों से पुकारा और उनके साथ गाँव गया। वृद्ध गोपिकायें नन्द के घर आईं और उन्होंने यशोदा और बच्चे का अभिनन्दन किया। जन्मोत्सव मनाया। रोहिणी आई, नन्द ने उसका आवश्यक सत्कार किया। कृष्ण गोपिकाओं का लाड़ला हो गया और बड़े प्यार से पलने लगा। कुछ दिन बीत गये।

गर्भ-स्राव और शिशु हत्या के लिए कंस ने कई राक्षसों को नियुक्त किया था। उनमें सबसे भयंकर पूतना थी। उसकी भयंकर आकृति थी। वह रात के समय बच्चों को खोजती आई। नन्द के यहाँ, माँ के बगल में कृष्ण को देखकर वह रुकी। लड़का बड़ा तेजस्वी और सुन्दर दीख पड़ रहा था। सब बच्चों की तरह न था। हो सकता है यह कंस को मारने के लिए ही जनमा हो।

२. कृष्ण की लीला

यह सोचते ही पूतना क्रुद्ध हो उठी। वह राक्षसी दान्त पीसने लगी। उसकी आँखों से अंगारे बरसने लगे। भौंहें तन गईं। माथे पर पसीना आ गया। साँसे तेज़ी से चलने लगीं। उसने उस बच्चे को माता के पास से लिया और अपने विष-सिक्त स्तन उसके मुख में रखे। कृष्ण जोर से रोया। उसने पूतना के स्तन जोर से पकड़ लिए और दूध के साथ पूतना की सारी शक्ति ही खींचने लगा। सच कहा जाये तो वह उस समय पूतना से बढ़कर राक्षस था।

उसने जोर से आर्तनाद किया और नीचे गिर पड़ी।

इस भयंकर आर्तनाद के कारण सब गोपिकायें चौककर उठीं। कृष्ण जब रोया तभी यशोदा उठी। उठते ही जब उसको बगल में लड़का न दिखाई दिया, तो उसने नन्द को बुलाया। नन्द जब आया तो उसके साथ और भी ग्वाले आये। उनको भयंकर पूतना का कलेवर दिखाई दिया। उसकी गोद में, पक्षी की तरह बैठा कृष्ण भी दिखाई दिया।

यशोदा और नन्द ने अपने लड़के को देखते ही "वाह, बेटे" कहते हुए कृष्ण को उठा लिया।

"क्या है यह? यह राक्षसी यहाँ कैसे आयी? जब वह बच्चे को ले जा रही थी, तो तुम क्या कर रही थी?" नन्द ने अपनी पत्नी से पूछा।

"बच्चे को, पेट भर दूध देकर मैंने सुला दिया था। दिया जल रहा था। बहुत देर तो मैं जगी रही, फिर यकायक आँखें मूँद गईं। वह भी ज्यादह देर न सोई। न मालूम यह राक्षसी कहाँ से आई? न मालूम वह बच्चे का क्या करना

चाहती थी ! यह क्या माया है, मुझे नहीं मालूम। इस राक्षसी के हाथ में पड़कर भी मेरा लड़के का बाल बाँका नहीं हुआ। यह हज़ार साल जियेगा।" यशोदा ने कहा।

ग्वालों ने सोचा कि कृष्ण एक बड़ी आपत्ति से बच गया था। वे बड़े खुश हुए और उन्होंने पूतना की लाश को एक ओर खींच दिया। नन्द ने अपने लड़के को गोदी में लिया। उसकी नज़र उतारी और मन्त्र पढ़कर उसे आशीर्वाद दिया।

दिन बीतते जाते थे और कृष्ण बढ़ता जाता था।

एक दिन वसुदेव ने अपने पुरोहित गर्ग नाम के ब्राह्मण को चुपचाप गोकुल भेजा। उसने आकर रोहिणी और यशोदा के लड़के का नामकरण किया, पहिला का राम और दूसरे का कृष्ण। फिर वह उसी तरह छुपा छुपा वापिस चला गया।

नन्द के आनन्द की सीमा न थी। उसने ब्राह्मणों को बुलवाया। उनको षड्सोपेत भोजन दिया। गौव्वें और वस्त्र दान में दीं। बड़ा उत्सव मनाया गया। गोकुल में जितने बन्धु थे उन सब को नन्द ने वस्त्र बाँटे। गोपूजा की गई। गोपियों ने यशोदा का अभिनन्दन किया, ग्वालों ने नन्द का अभिनन्दन किया।

उधर मथुरापुर में कंस को पूतना की क्या गति हुई थी, उसके बारे में खबर मिली। उसके राक्षस भृत्यों ने जो कुछ हुआ था, उसे जाकर बताया। कंस का सारा सन्देह, नन्द ग्वाले के लड़के पर था। वह कुछ घबरा भी गया था। उसने घोषणा करवा दी कि नन्द के लड़के का काम तमाम कर दिया जाये। उन राक्षसों

में शकट नाम का एक राक्षस अदृश्य रूप में नन्द की गाड़ी में जा छुपा और मौके की प्रतीक्षा करने लगा।

यशोदा कृष्ण को बुलाकर एक गाड़ी के नीचे बिस्तर बिछाकर उसे उस पर लिटाकर, और स्त्रियों के साथ नदी में स्नान करने गई। उसके जाने के कुछ देर बाद बच्चा उठ बैठा और आस पास जब कोई न दिखाई दिया तो दोनों हाथ मुख में रखकर वह जोर से रोया। सारा मुँह काजलवाले आँसुओं से तर हो गया। वह लातें मारने लगा। उसने गाड़ी को जब एक लात मारी, तो वह एक तरफ़ गिर गई और टूट फूट गई।

इतने में यशोदा नहा धोकर आई और हड़बड़ाई गाड़ी की ओर गई। गाड़ी उलटी पड़ी हुई थी। वह जोर से चिल्लाई और लड़के को छाती से लगाते हुए सोचने लगी, मैं यह सोचकर नहाने चली गई थी कि लड़का सो रहा था। अब तुम्हारे पिता आकर क्या सोचेंगे, यह देख मुझे कितना बुरा भला कहेंगे? कौन बता सकता है कि यह गाड़ी ऐसी कैसे हुई? अगर वे पूछेंगे, तो मैं क्या कहूँगी। सब

मुझे ही जली कटी सुनायेंगे।" वह कृष्ण को गोदी में बिठाकर दूध पिलाने लगी।

इतने में नन्द गोप, ग्वालों से बातें करता उस तरफ़ आया। उसके बाल बिखरे हुए थे। सारे शरीर पर धूल जमी हुई थी। हाथ में एक डँडा था। आते हुए टूटे हुए पहिये को, गिरी हुई गाड़ी को देखकर वह यकायक काँप-सा उठा। चूँकि उसका लड़का उस गाड़ी के नीचे ही हमेशा सोया करता था और गाड़ी जब इतनी टूट फूट गई है, तो लड़के का क्या हुआ होगा?

तुरत उसने अपनी पत्नी को और दूध पीते बच्चे को देखा। उसकी जान में जान आई। कृष्ण उसकी तरफ़ खुशी खुशी देख रहा था। उसने हौंसला करके पत्नी से पूछा—"गाड़ी की यह हालत कैसे हुई? नन्द ने सोचा कि कहीं यह बैलों की करतूत तो न थी, कहीं इस तरफ़ कोई तूफ़ान तो नहीं आया था?"

"कुछ भी आया हो, बच्चा सुरक्षित है, यही मेरे लिए काफ़ी है।" नन्द ने फिर कहा। यशोदा ने गदगद स्वर में कहा—

"सारी गलती मेरी ही है। लड़का सो रहा था, मैं गाड़ी के नीचे बिस्तर लगाकर, इसे लिटाकर यह सोच कि नदी पास में ही थी, नहाने चली गई। नहाकर आती हूँ, तो देखती हूँ कि यह हालत हो गई है। भाग्य अच्छा था, इसलिए यह आपत्ति भी टल गई।"

इतने में कुछ लड़के उस तरफ़ आये। "हम यहाँ खेल रहे थे। तुम्हारे लड़के कृष्ण ने जब लात मारी; तो गाड़ी टूटकर एक तरफ़ गिर गई। देखिये कितने आश्चर्य की बात है।"

यशोदा और नन्द के आश्चर्य की सीमा न थी। उन्होंने अपने लड़के का चुम्बन किया। नज़र उतारी। कृतज्ञता में नन्द ने देवताओं को नमस्कार किया। इतने में लोग जमा हो गये। वे सब जानकर बड़े चकित हुए। फिर उन्होंने गाड़ी उठाई, उसकी मरम्मत करके वे चले गये।

दिन बीतते जाते थे। कृष्ण बड़ा हो रहा था, वह पलंग की चौखट पकड़कर रेंगने लगा। अगर कोई गुदगुदी करता, तो जोर से हँसता। अंगुली के सहारे, छोटे छोटे कदम रखने की कोशिश करता। तालियाँ बजाकर "आ....आ" कहता तो वह पास जाता। जो कोई उसे देखता, उसे चूमे बगैर न रहता। इसलिए इधर उधर देखता वह कहीं खिसक जाता। देखनेवाले यह देख बड़े खुश होते। वह धूल में खेल खालकर सारा शरीर खराब कर लेता।

माँ यशोदा कृष्ण को रोज मक्खन के गोले बनाकर खिलाती। कृष्ण के हाथों पर मक्खन होता, मुख में मक्खन होता, सारे शरीर पर मक्खन पोत लेता। सवेरे जब खूब मक्खन खिलाकर, माँ अपने काम पर जाती, तो कृष्ण भी रेंगता रेंगता, या लड़खड़ाता उसके पीछे जाता। स्त्रियों के पास जाकर मक्खन खिलाने के लिए कहता। वे मक्खन देतीं, पर वह और मक्खन माँगता जाता। जो मक्खन निकाल रही होती, उनके पास जाकर मथनी पकड़ लेता। उनके आँचल खींच देता। उनकी वेणी बिगाड़ देता।

"मक्खन तो दूँगी, पर ज़रा नाचकर तो दिखाओ।" जब गोपिकायें कहतीं, तो यूँ नाचता कि पैरों में बँधे पायल गूँज उठते। वे मक्खन निकालना बन्द कर

देतीं और उसे देख खुश हुआ करतीं। हमेशा वह गोकुल के घरों में घूमा करता। उससे जब वे तंग आ जाते, तो गोपिकायें चारों तरफ़ से "पकड़ो, पकड़ो" कहती उसको घेर लेतीं। उसको पकड़कर यशोदा के पास ले जातीं।

जैसे जैसे समय बीतता जाता था, वैसे वैसे कृष्ण के खेल भी बदलते जाते थे। गोपी बाल बालिकायें बलराम और कृष्ण के पीछे पीछे ही फिरा करते। सब जत्था-सा बनाकर सारे गाँव में घूमा करते। कृष्ण घड़ों में रखा दूध, घी, वगैरह पी जाया करता। पेट भर खाता, जो बाकी रहता, उसे नीचे फेंक फाँक देता। उसे कोई भी इस शरारत से न रोक पाता। क्षीर समुद्र में निकले अमृत को जिस प्रकार मोहिनी ने देवताओं में बाँट दिया था, उसी प्रकार कृष्ण ग्वालों के घर दूध मक्खन स्वयं ही न खाता था, पर अपने साथ के बच्चों को भी खिलाया करता। उसके नटखटपन की कोई हद न थी। कलशों में से दूध पीता और उनमें लस्सी भर देता। घी ले जाकर आग में डाल देता, दही में दूध मिला देता। मक्खन में दही मिला देता। लस्सी में घी मिला देता। बछड़े खोल देता और उनको गौव्वों का दूध पीने देता। कुछ को छोड़ देता। रस्सियाँ तोड़ देता। बच्चों को इकट्ठा करके खेला करता। हर खेल में वह जीतता और सबको पीटता। कभी कभी किसी के पीठ पर चढ़ जाता।

इस प्रकार कृष्ण गोकुल में शरारतें कर रहा था और गोकुलवासी सोच न पाते थे कि उसको कैसे सम्भाला जाये।

अरण्य पुराण

[६]

मौवली ने मनुष्यों की भाषा सीखने का निश्चय किया। जब वह जंगल में था, तो वह हर जानवर की जबान जानता था। मेस्सुवा के मुख से जो बात निकलती, उसे मौवली भी बोला करता। अन्धेरा होने से पहिले उस झोंपड़ी में जितनी चीजें थीं, उनमें से कई के नाम उसे आ गये।

जब सोने का समय आया, तो एक बड़ी समस्या-सी आ खड़ी हुई। पिंजड़े से उस झोंपड़े में मौवली को सोना बिल्कुल न पसन्द था। जब उन्होंने दरवाज़े बन्दकर दिये, तो वह खिड़की से बाहर चला गया।

"वह जहाँ चाहे, जाने दो। तुम यह याद रखो कि वह अभी तक कभी बिस्तरे पर नहीं सोया है। यदि वह हमारे लड़के की जगह आया है, तो वह हमें छोड़कर कहीं न जायेगा।" मेस्सुवा के पति ने कहा।

मौवली जाकर खेत के पास की हरी घास पर लेट गया।

उसे गुजरी बातें याद आने लगीं। उस दिन जब बघेल ने "लाल फूल" लाने के लिए कहा था, तो वह एक घर से थोड़ी-सी आग जंगल ले गया था। कल रात अकेला शिकार में हरा दिया गया था। वह झुण्ड द्वारा दिये जानेवाले दण्ड का शिकार हो गया था। बघेल ने बताया था कि झुण्ड ने सारा दिन मौवली को खोजा था। मौवली ने उस दिन सूखी लकड़ियां से आग बनाये रखी। उस दिन रात को ही पहाड़ की चोटी पर झुण्ड की एक सभा हुई।

शेरखान ने भाषण किया। मौवली ने आपत्ति उठाई कि शेरखान को झुण्ड के नेतृत्व के बारे में बोलने का कोई अधिकार न था। परन्तु झुण्ड ने उसकी बात ठुकरा दी। शेरखान ने कहा कि वह मनुष्य का बच्चा उसका था। झुण्ड इतना उकसाया गया कि वह मौवली को मारने तक तैयार हो गया। मौवली खड़ा हो गया और उसने झुण्ड के बीचों बीच आग फेंक दी। आग के साथ उसने सूखी लकड़ी भी रखी। आग देखकर सारा झुण्ड डर गया। शेरखान के बाल जल गये। उसके बाद भिड़ियानी से विदा लेकर वह भाग आया।

उसने आँखें बन्द की थीं, कि उसकी ठुड्डी पर किसी की नाक लगी। वह उसका "बड़ा भाई" था, यानि भेड़ियानी का बड़ा लड़का।

"छी, छी, तुझे ढूँढ़ता ढूँढ़ता बीस मील आया हूँ। क्या इसका यही फायदा है? तेरे शरीर से धुँये की बू आ रही है। पशुओं की दुर्गन्ध आ रही है। इतने में ही मनुष्य हो गये। उठो। मैं एक खबर लाया हूँ।" बड़े भाई ने कहा।

मौवली ने उसको गले लगाकर पूछा—"जंगल में सब ठीक है न?"

"सिवाय उनके जो लाल फूल से जल गये थे सब ठीक हैं! शेरखान के बाल खूब जल गये थे न! उनके बढ़ने तक वह कहीं और शिकार खेलने गया है। पर कसम खायी है कि वापिस आकर तेरा काम तमाम करेगा।" बड़े भाई ने कहा।

"उसमें क्या है! मैंने भी एक कसम खाई है। कभी कभी आकर ताजी खबरें सुना दिया करो, अभी मुझे नीन्द आ रही है।" मौवली ने कहा।

"तुम मनुष्यों की बातों में आकर यह न भूल जाना कि तुम भेड़िये हो।"

"यह कैसे भूलूँगा। तुम्हें और अपनी गुहा के लोगों को कभी भी न भूलूँगा। मैं यह भी न भूलूँगा कि मुझे झुण्ड से निकाल दिया गया था।"

"मगर खबरदार रहना कि तुम्हें एक और झुण्ड से फिर कोई न निकाल दे। मनुष्य मनुष्य ही हैं, जब वे बातें करते हैं, तो लगता है, मेंढ़क तालाब में टरटर कर रहे हों। मैं जब आऊँगा, तो हरी घासवाले मेंढ़ के पार तुम्हारी इन्तज़ार करूँगा।" यह कहकर चला गया।

कहा जा सकता है कि मौवली तीन महीने तक कहीं गाँव से बाहर न गया। वह मनुष्यों के आदतें सीखने में लग गया। पहिले उस पर एक कपड़ा ओढ़ा गया। वह उसे बड़ा बुरा लगा। फिर उसे पैसे के बारे में जानना पड़ा। पर वह उसे समझ में न आया। फिर उसे खेत में हल चलाना सिखाया गया। पर उससे क्या फ़ायदा होगा, यह वह न जान सका।

गाँव के लड़कों ने उसे बहुत तंग किया। क्योंकि वह जंगल में पला था, इसलिए आसानी से वह अपने क्रोध को काबू में कर लेता था। जंगल में अगर प्राण बचाने हों तो गुस्सा नहीं करना चाहिए। परन्तु जब उसे लड़के चिढ़ाते कि वह खेलने न आता था, न पतंग ही उड़ाता था या उसका उच्चारण सुनकर मज़ाक करते, तो वह उनको चीर फाड़ देने की सोचता। पर यह सोच बच्चों को मारना ठीक न था, वह ठहर जाता। मौवली बिल्कुल न जानता था कि उसमें कितना बल था। वह जानता था कि उससे कई बलशाली जन्तु थे। गाँववाले

सोचते कि उसमें एक बैल के बराबर बल था।

मनुष्यों में जो जात पात की बात थी, उसके बारे में मौवली को कुछ नहीं मालूम था। कुम्हार का गधा जब एक गढ़े में गिर गया, तो उसने उसकी पूँछ पकड़कर उसे उठाया। घड़े जिन्हें वह हाट ले जा रहा था, रखवाने में उसने कुम्हार की मदद की। यह बड़ी गलत बात थी, क्योंकि कुम्हार नीची जाति का था। गधे का तो कहना ही क्या? पुरोहित ने मौवली को खूब डाँटा फटकारा।

"कल तुम्हें भी गधे पर घड़ों के साथ चढ़ा दूँगा।" मोवली ने पुरोहित से कहा।

पुरोहित ने मेस्सुआ के पति के पास जाकर कहा—"इस लड़के को जितनी जल्दी काम में लगा दो उतना ही अच्छा है।" गांव के मुखिये ने मौवली को बुलाकर कहा—"कल से तुम भैंसें चराया करो, समझे।" मौवली के लिए इससे अच्छी कौन-सी बात हो सकती थी। वह चूँकि गांव के लिए काम कर रहा था। इसलिए शाम को पीपल के नीचे होनेवाली सभा में शामिल होने के लिए गया। वहां गांव का मुखिया, नाई, शिकारी आदि आते। पेड़ की टहनियों पर बन्दर बातें किया करते। पेड़ के चबूतरे के नीचे नाग रहता था। चूँकि वह पवित्र समझा जाता था, इसलिए हर रोज़ रात को उसे दूध दिया जाता। बड़े बुज़ुर्ग वहाँ जमा होते, हुक्का पीते पीते, काफी देर तक बातें किया करतें। वे देवताओं, मनुष्यों और भूतों के बारे में अजीब अजीब बातें कहा करते। (अभी है)

६०. अति प्राचीन गुहा चित्र

मध्य फ्रान्स की गुफाओं में २०,००० पहिले प्रस्तरयुग के मनुष्यों ने ये अद्भुत चित्र बनाये थे। इन्होंने अंगुली को रंग में डुबोकर और हड्डियों की फूँकनियों से रंग फूंककर ये चित्र बनाये थे। इनमें शिकारी अपने पकड़े हुए घोड़ों को, पशुओं को भगाते हुए दिखाये गये हैं।

Photo by Madan Gopal

पुरस्कृत परिचयोक्ति

मछली की दौलत निकलती है पानी से।

प्रेषक: अ. सा. मुजावर - बुलाँ

Photo by A. L. Syed
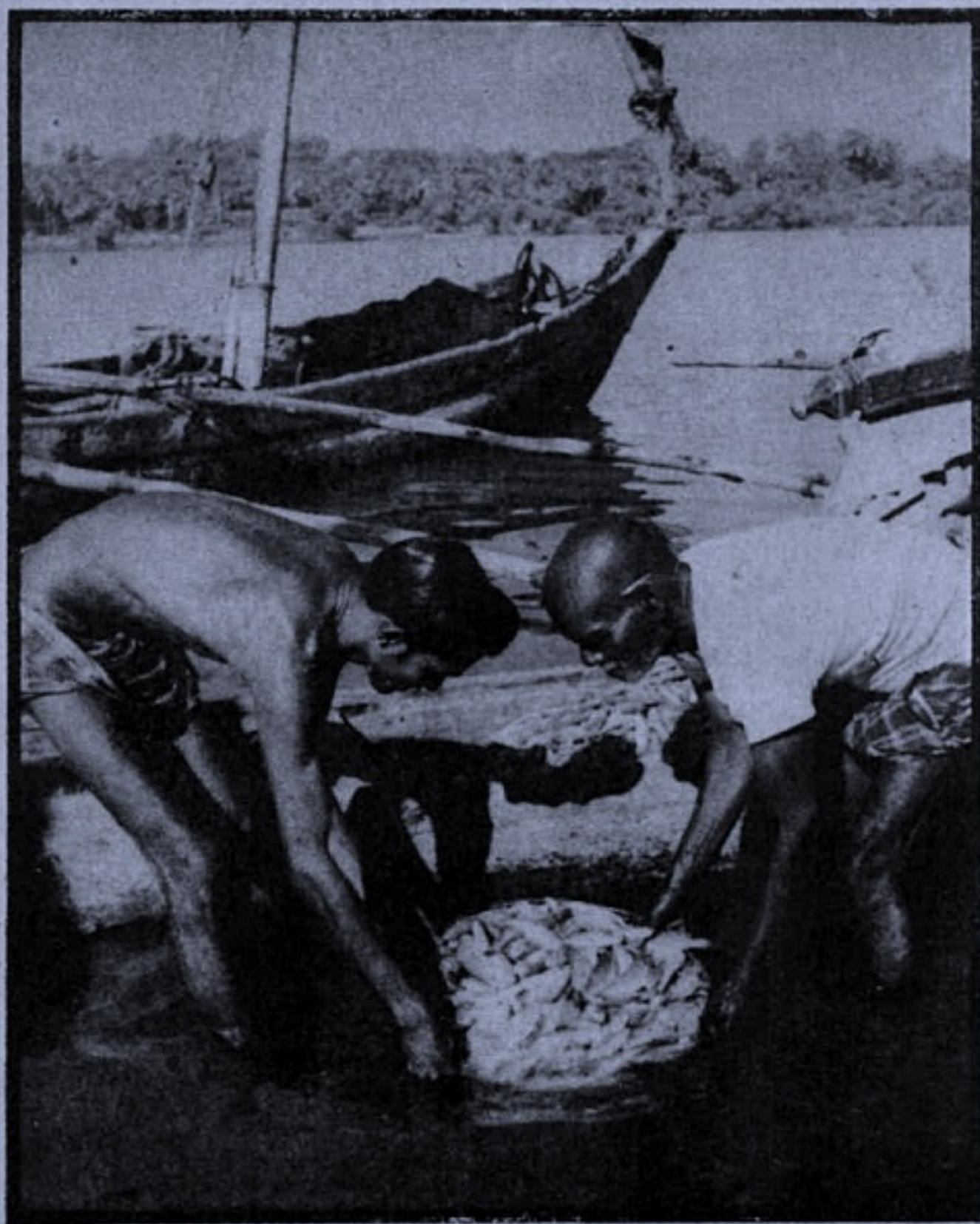
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

प्राप्त होती है यह दौलत
बड़ी मेहनत से !!

प्रेषक:
अ. मा. मुजावर - कुर्ला

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

फरवरी १९६७ पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियां कार्ड पर ही भेजें !

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ दिसम्बर १९६६ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

दिसम्बर – प्रतियोगिता – फल

दिसम्बर के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: **मछली की दौलत निकलती है पानी से !**

दूसरा फ़ोटो: **प्राप्त होती है दौलत बड़ी मेहनत से !!**

प्रेषक: **अ. सा. मुजावर,**

पो. बुर्ली, व्हाया किर्लोस्करवाडी जि. सांगली (महाराष्ट्र)

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'